



चन्दामामा

अक्तूबर १९९८

समाचार-विशेषताएँ

हमारे बारहवें प्रधान मंत्री

ऐसे सुप्रसिद्ध व्यक्ति से दोस्ती का हाथ बढ़ाने के लिए आप लालायित तो होंगे ही, जिन्हें पालतू बिल्लियों व कुत्तों से बेहद प्यार है; जिन्हें पंचतंत्र कथाएँ बहुत प्रिय हैं। ये ही हमारे देश के बारहवें प्रधानमंत्री हैं । पिछले मार्च मास में इन्होंने प्रधानमंत्री का पद स्वीकार किया। ये व्यक्ति कोई और नहीं, सर्वप्रिय श्री अटल विहारी वाजपेयी हैं । १९२६ में क्रिस्मस की रात को इनका जन्म हुआ। तब इनके माता-पिता ग्वालियर के एक गिरिजाघर के बग़ल के एक घर में रहते थे। पिता का नाम है कृष्ण बिहारी वाजपेयी। माता का नाम कृष्णादेवी है। ये उनके चौथे पुत्र हैं और उनकी छठवीं संतान हैं । उन्होंने उनका नाम रखा अटल (स्थिर) ।

श्री वाजपेयी के दादा श्यामलाल आगरा के समीप ही के बदेश्वर के निवासी थे। श्रीवाजपेयी के पिता ने अध्यापक वृत्ति अपनायी और ग्वालियर में आकर बस गये। अपना निजी घर बनवाया और उसका नाम रखा 'कृष्ण कृपा'। इसी घर में श्रीवाजपेयी का जन्म हुआ।

कृष्ण बिहारी ने अपने सब बच्चों को बड़े ही प्यार से पाला-पोसा और उन्हें अनुशासन सहित बड़ा किया। किसी एक संतान के साथ उन्होंने पक्षपात नहीं दिखाया। सब बच्चे एक लाल्टेन के इर्द-गिर्द बैठते थे और श्रद्धापूर्वक पढ़ते-लिखते थे। यद्यपि उनके भाई मर गयें, फिर भी दीपावली, रक्षाबंधन जैसे त्योहारों के अवसरों पर लगभग सत्तर सदस्यों से भरे अपने पारिवारिक सदस्यों के साथ समय बिताने में ये पर्याप्त अभिरुचि दिखाते हैं। ये अविवाहित ही रह गये।

कृष्णबिहारी की बड़ी इच्छा भी कि उनके बच्चे सरकारी कर्मचारी बनें। उनके तीनों बड़े बेटों ने अपने पिता की इच्छा पूरी की और उन्होंने तब के ब्रिटिश सरकार



में नौकरी पायी। किन्तु उनके आखिरी पुत्र अटल ने इसे स्वीकार नहीं किया। कालेज की पढ़ाई के दौरान वे साम्यवादी सिद्धांतों से प्रभावित हुए। आल इंडिया स्टूडेंट फेडरेशन के सदस्य बने। कुछ समय बाद उनकी विचारधारा में आमूल परिवर्तन हुआ और वे राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ में शामिल हुए। श्यामप्रसाद मुखर्जी ने १९५१ में जनसंघ की स्थापना की, जिसमें श्री वाजपेयी सदस्य बने। १९५७ में जनसंघ के उम्मीदवार बनकर लोकसभा के लिए निर्वाचित हुए। १९६२ के चुनावों में वे हार गये किन्तु १९६७ में पुनः जीत गये। १९७१, १९७७ में जो चुनाव संपन्न हुए, उनमें ग्वालियर निर्वाचिन-क्षेत्र से विजयी हुए। १९८० में जीत गयें और १९८४ में ग्वालियर में ही हार गये। १९८९ में विदीशा व लखनऊ दोनों निर्वाचिन क्षेत्रों से निर्वाचित हुए। पिछले फरवरी में मध्यांतर चुनाव हुए, जिनमें वे लखनऊ से लोक सभा के लिए निर्वाचित हुए।

१९६८-७३ के मध्यकाल में इन्होंने जनसंघ का नेतृत्व संभाला। किन्तु १९७५-७६ की आपातकालीन स्थिति के उपरांत अपने अनुचरों सहित वे जनता दल में शामिल हुए। १९७७ में जनता दल की महत्वपूर्ण विजय हुई। पहली बार कांग्रेसेतर सरकार की स्थापना केंद्र में हुई। प्रधानमंत्री मोरारजी देशाय की सरकार में श्री वाजपेयी ने विदेश मंत्री का कार्य-भार बड़ी ही क्षमतापूर्वक संभाला। मुख्यतया भारत-पाक के युद्ध के बाद (१९७१) दोनों देशों के बीच बढ़ती हुई शत्रुता की भावना को मिटाने की दिशा में इन्होंने पर्याप्त परिश्रम किया। इसी दौरान संयुक्त राष्ट्र संघ में इन्होंने हिन्दी में भाषण देकर रिकार्ड स्थापित किया। १९८० में पुनः कांग्रेस ने सत्ता संभाली। विपक्ष में रहकर इन्होंने भारतीय जनता दल की स्थापना की और इसके वे प्रथम अध्यक्ष बने।

१९९५ में उत्तम सांसद घोषित हुए और गोबिंद वल्लभ पंत पुरस्कार से ये पुरस्कृत हुए। इस प्रशंसा-पत्र में लिखा गया कि श्री वाजपेयी प्रभावशाली वक्ता, प्रज्ञा-पांडित्य से भरपूर राजनीतिज्ञ, निस्वार्थ सामाजिक सेवक, साहित्य वेत्ता, कवि, पत्रिका रचयिता, व बहुमुखी प्रज्ञाशाली हैं। उस प्रशंसा-पत्र में यह भी बताया गया कि ये इन सबसे बढ़कर प्रमुख राष्ट्रीय नेता हैं।

१९९६ में श्री वाजपेयी भारत के नौवें प्रधानमंत्री बने। किन्तु इस पद पर वे तेरह दिनों तक ही रह पाये। अब इन्होंने भारत के बारहवें प्रधानमंत्री का भार संभाला। मार्च १९ को इन्होंने शपथ ली।

भगवद्गीता, रामचरितमानस श्री वाजपेयी के प्रिय ग्रंथ हैं। ईमानदारी से जीवन बिताना इनका आदर्श है। भारत देश को सर्वोत्तम देश के रूप में संवारना इनकी आकांक्षा है।

नूतन प्रधानमंत्री को हमारी शुभकामनाएँ।



श्मशान में शिशु पिशाचिनी

रामेश का अपना कोई नहीं था। वह जन्म से ही कुबडा था। उसकी एकमात्र संपत्ति थी, दादा की दी हुई छोटी-सी झोंपड़ी। कचौड़ियाँ, वड़े, पकोड़े आदि बेचकर अपना पेट भरता था।

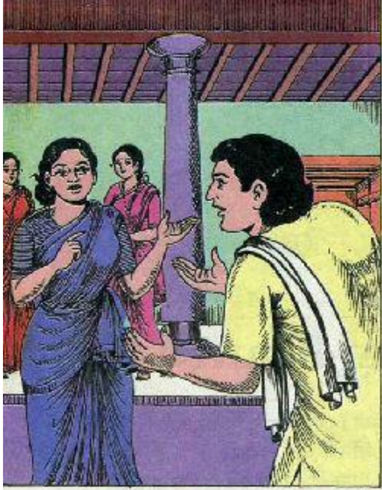
रमेश के बग़ल का घर किसी कारणवश बेचा जा रहा था। रंगनाथ ने वह घर खरीद लिया। उसने शहर में व्यापार किया और सब कुछ खो दिया। इस गाँव में उसकी चार एकड़ की ज़मीन थी। बीस सालों के पहले उसने वह खेत किसी के सुपुर्द किया और व्यापार करने शहर गया। जीने का कोई और दूसरा रास्ता उसे दिखायी नहीं पड़ा तो खेती करके अपना पेट भरने यहाँ आया।

दूसरे ही दिन उसने वड़े पकाते हुए रामेश को देखा। उसने उसके बारे में आवश्यक जानकारी प्राप्त की। रंगनाथ की दो बेटियाँ हैं। रंजनी पहली पत्नी की बेटी है। जब वह दो साल की उम्र की थी, तब उसकी माँ मर गयी। रंगनाथ ने कमला से दूसरी शादी की। उसी की बेटी है मंजरी।

एक दिन रंगनाथ ने, रामेश से कहा "बेटे, मेरी दोनों बेटियाँ शादी के लायक़ हो गयीं। उनकी शादी किये बिना मैं शांति से ज़िन्दगी गुज़ार नहीं सकूँगा। हर पल मैं बेचैन ही रहता हूँ।" साथ ही उसने अपने परिवार के बारे में विशद रूप से बताया।

रजनी का सौंदर्य सहज सौंदर्य था। बहुत ही मीठा गाती भी थी। उसे ये भगवान के दिये वर थे। पिछवाड़े में उसने कितने ही पौधे रोपे और उन पौधों को पानी देती हुई वह गाती रहती थी। मंजरी सुंदर नहीं थी, परंतु सजधजकर घूमती रहती थी। अलंकार के प्रति उसकी काफ़ी आसक्ति थी। इसलिए वह अधिकतर आइने के सामने बैठी रहती थी और अपने को सजाने में मग्न रहती थी। उसका अधिक समय इसी काम में लगता था।

भूपति राजा



रामेश जब काम पर लगा रहता था, तब रंजनी के मीठे गीतों को सुनते हुए अपनी थकावट भूल जाता था। अब वह खाने के पदार्थ और ज्यादा बनाने लगा, जिससे उसकी कमाई भी बढ़ती गयी। उसके पास अब ख़ास रक़म जमा हो गयी। थोड़ा-सा धन कमा लेने के बाद उसमें शादी करने की इच्छा पैदा हो गयी। उसे लगा कि रंजनी से शादी कर लूँ तो मुझसे बढ़कर भाग्यवान कोई और नहीं होगा। परंतु जब कभी भी उसे अपने कुबड़े होने की बात याद आती तो उसका उत्साह ठंडा हो जाता और इस विचार को अपने मन से निकाल देता।

रंजनी से बात करने का उसे साहस ही नहीं होता। अचानक दिल की बीमारी का शिकार होकर रंगनाथ खाट पर पड़ा रहा तो उसे देखने के लिए रामेश उसके घर गया।

उसने दर्द-भरे स्वर में रामेश से कहा "मैं कम से कम बड़ी बेटी की शादी ही सही, देख सकूँगा, इसकी भी मुझे उम्मीद नहीं। दहेज नहीं मांगा जाए तो किसी लंगड़े से ही सही, उसकी शादी करा दूँगा। परंतु ऐसे अपाहिज भी कोई दिखाई नहीं दे रहे हैं" यह कहते हुए उसकी आँखों से आँसू बह रहे थे।

"आपको और रंजनी को कोई आपत्ति न हो तो मैं उससे शादी करूँगा।" रामेश ने कहा।

रामेश की इन बातों से रंगनाथ बहुत ही खुश हुआ। अपनी पत्नी कमला को बुलाकर यह खुशखबरी सुनायी।

"अब ऐसी क्या जल्दी आ पड़ी है। यह शादी की बातें करने का समय नहीं है। आँखें बंद करके चुपचाप लेट जाओ।" कमला ने कहा।

रंगनाथ की आँखें जो बंद हो गयीं, हमेशा के लिए बंद ही रहीं।

रंगनाथ की मृत्यु के तीन महीनों के बाद रामेश ने रंजनी से अपने विवाह के संबंध में कमला से बातें की।

रंजनी का विवाह करने पर पैसे खर्च होंगे। अलावा इसके, अगर उसका विवाह हो जाए तो घर का काम-काज कौन संभालेगा ? कमला ने बात टालने के लिए एक योजना बनायी और रामेश से कहा "देखो बेटे, रंजनी सबेरे ही जाग जाती है। कनेर पुष्पों से देवी की पूजा करती है। आधी रात को विकसित होनेवाले उन पुष्पों के पेड़ अरण्य के शिथिल शिवालय के प्रांगण में हैं। उसके पिता जब तक ज़िन्दा थे, स्वयं वहाँ जाते और ले आते थे। तुम तो कुबड़े हो। क्या रात के समय वहाँ

जाना तुम्हारे लिए संभव होगा ?"

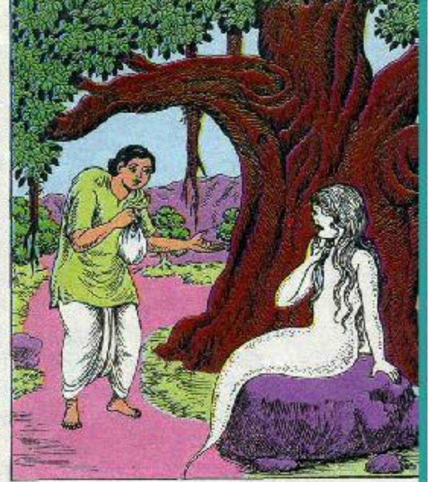
रामेश, रंजनी को बहुत ही चाहता था। इसलिए उसने तुरंत कहा "यह थोड़े ही कोई बड़ा काम है।"

"तो ठीक है। आज रात को जाओ और कनेर पुष्प ले आना" कमला ने कहा। कमला का उद्देश्य था कि रामेश को कोई क्रूर जंतु खा जायेगा और यों वह बला टल जायेगी, शाश्वत रूप से इस समस्या का समाधान हो जायेगा।

उस दिन रात को रामेश जंगल की ओर निकल पड़ा। वह शिथिल शिवालय को ढूँढता हुआ घने अंधकार में आगे बढ़ता गया। आख़िर एक स्थल पर उसने शिवालय देखा और उन पेड़ों को भी देखा, जिनमें कनेर पुष्प लटक रहे थे। उसने मुट्ठी भर के फूल तोड़े और गठरी बाँध ली। लौटकर वह थोड़ी देर गया कि नहीं, उसने बरगद के वृक्ष के पीछे से ऊंचे स्वर में सिसकियाँ सुनायी पड़ीं।

अचंभे में आकर रामेश वृक्ष के पीछे की तरफ़ गया। वहाँ उसने केश फैलाये सिसकियाँ भरती हुई चट्टान पर बैठी एक शिशु पिशाचिनी को देखा। रामेश घबराकर चिल्ला उठा। वह शिशु पिशाचिनी भी जोर-जोर से चिल्लाने लग गयी।

रामेश समझ गया कि उसे देखकर वह पिशाचिनी डर गयी। उसने धीरज समेटकर अपना हाथ उठाते हुए कहा, "तुम्हें घबराने की कोई ज़रूरत नहीं। मैं उन बड़े-बड़े पिशाचों को ही मार डालता हूं, जो अपनी शक्तियों पर आवश्यकता से अधिक गर्व करते हैं। छोटे-छोटे पिशाचों को मैं कोई हानि नहीं पहुँचाता। मुझे मंत्र-तंत्र सिखानेवाले गुरु को भी मैंने यह

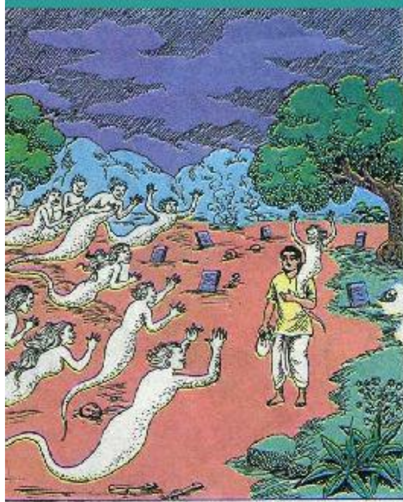


वचन दे रखा है। अब बताओ, तुम्हारे दुख का कारण क्या है ?

"बड़े-बड़े पिशाच मना कर रहे थे, फिर भी उनकी बातें नहीं सुनीं। जंगल निकल पड़ी और रास्ता भूल गयी। मुझे अब मालूम नहीं कि वह श्मशान कहाँ है, जहाँ मैं रहती हूँ। मैं मनुष्यों से बहुत डरती हूँ" आँसू पोंछती हुई उस शिशु पिशाचिनी ने कहा।

"अच्छा, एक काम करो। मैं गाँव जा रहा हूँ। मेरे पीछे-पीछे आना। वह श्मशान दिखाऊँगा।" रामेश ने कहा।

शिशु पिशाचिनी उठने को खड़ी हो गयी। पर फिर से चट्टान पर बैठ गयी और कहने लगी "जंगल भर घूमती रही। मैं बहुत ही थक गयी। मुझसे चला नहीं जाता। मेरे पैरों में काँटें भी चुभ गये"।



रामेश उसकी बातों पर हँस पड़ा और कहा "आगे से चप्पल पहने बिना जंगल में कभी न घूमना ।" कहते हुए उसने कनेर पुष्पों की गठरी उसे दी और उसे अपने कंधे पर बिठाकर गाँव की ओर निकला ।

थोड़ी दूर जाने के बाद उसने देखा कि कुछ चोर एक पेड़ के तले बैठकर सोने की अशर्फ़ियाँ आपस में बाँट रहे हैं । एक कुबड़े के कंधे पर केशों को फैलाकर आराम से बैठी शिशु पिशाचिनी को देखकर वे बहुत ही भयभीत हो गये । पागलों की तरह चिल्लाते हुए उन अशर्फ़ियों को वहीं छोड़कर तेज़ी से भाग निकले ।

रामेश ने उन अशर्फ़ियों को वहीं पड़ी हुई चमड़े की थैली में डाल दिया और बड़े ही उत्साह के साथ निकल पड़ा । श्मशान पहुँचते ही रामेश ने देखा कि वहाँ बड़े-बड़े पिशाच व पिशाचिनियाँ बैठे हुए हैं । वे गायब शिशु पिशाचिनी को लेकर बहुत ही चिंतित हैं । जैसे ही उन्होंने उसे रामेश के कंधे पर देखा, आनंद से चिल्लाते हुए आगे बढ़े । रामेश ने शिशु पिशाचिनी को नीचे उतारा ।

अति आश्चर्य । कुबड़ा रामेश अब सीधा हो गया । पिशाचों ने ताली बजाते हुए कहा "हमारी नन्ही, प्यारी-प्यारी पिशाचिन को सुरक्षित ले आये, इसके उपलक्ष्य में हमारी तरफ़ से यह भेंट ।" रामेश उन्हें अपनी कृतज्ञता जताकर घर पहुंचा । उसने सोचा कि अगर मैं कमला से बताऊं कि शिशु पिशाचिनी के कारण मैं सीधा हो गया तो शायद वह डर जायेगी, इसलिए उसने कहा "लगता है, जंगल के बीचों-बीच जो शिवालय है, उसकी महिमा अब तक कोई नहीं जानता । मैंने मंदिर में क़दम रखा कि नहीं, मैं बिल्कुल सीधा हो गया । मेरा कुबड़ापन दूर हो गया । वहाँ मुझे सोने की अशर्फ़ियों से भरी यह थैली भी मिली ।"

फिर वहीं उपस्थित रंजनी से उसने कहा "जबसे तुमसे शादी रचाने का विचार मन में जगा, तब से सब कुछ अच्छा ही हो रहा है । शादी हो जाए तो और अच्छा होगा । मेरा भाग्य और चमक उठेगा"।

उसकी बातें सुनकर रंजनी शरमा गयी और दरवाज़े के पीछे जाकर छिप गयी ।

सौतेली बेटी के भाग्य को देखते हुए कमला ईर्ष्या से जल उठी । उस दिन शाम को उसने रामेश से कहा "देखो बेटे, रंजनी तुमसे शादी करना नहीं चाहती । लगता है कि वह किसी राजकुमार या जमींदार के बड़े बेटे से शादी करना चाहती है । मेरी बेटी मंजरी तुम्हें बहुत चाहती है । वह तुम पर अपनी जान लुटाने तैयार है । उससे शादी कर लो और सुखपूर्वक जीवन बिताओ ।'

"ऐसी बात है । मुझे सोचने के लिए थोड़ी-सी मोहलत दीजिये ।" रामेश ने कहा । उसे संदेह हुआ कि कमला जान-बूझकर झूठ बोल रही है ।

किसी ने दरवाज़ा खटखटाया तो रामेश ने दरवाज़ा खोला । शिशु पिशाचिनी अंदर आती हुई बोली "पहली-पहली बार मैं गाँव में आयीं । तुम्हें देखने के बाद मनुष्यों से मेरा जो भय था, दूर हो गया. ।"

कनेर पुष्पों को जिस गठरी में बाँधा था, उसके उनपर का कपड़ा उसके पास ही रह गया । वह उसे लौटाने आयी । रामेश ने बड़े ही प्यार से उसे वड़े और कचौड़ियाँ खिलायीं ।

उसने पूछा "इन्हें क्या कहते हैं ?"

अपनी शादी की बात को लेकर चिंतित रामेश ने बिना सोचे-विचारे कह दिया "रंजनी, मंजरी"।

कमला को लगा कि रामेश के घर में कोई आया हुआ है और बातें चल रही हैं तो आतुर हो बाहर आयी । "इतनी रात को तुम्हारे घर कौन आया ।" चिल्लाती हुई बोली ।

रामेश घबराता हुआ बाहर आया और कहने लगा "मेरे मामा की बेटी । वह रातों में ही सफ़र करती है । दिन में कहीं जाती ही नहीं । मैं उससे पूछ रहा था कि रंजनी और मंजरी में से किससे शादी करने से मेरा शुभ होगा"? यह कहकर वह फौरन अंदर चला गया । उसे डर था कि वह वहीं खड़ा रहा तो पता नहीं और क्या-क्या सवाल करेगी ।

कमला ने उसके जवाब का विश्वास नहीं किया । उसने खिड़की से झाँककर देखा । थाली में रखे हुए खाद्य पदार्थों को देखती हुई उस समय शिशु पिशाचिनी बता रही थी "मैं पतली रंजनी को नहीं, मोटी मंजरी को ही खाऊँगी ।"

कमला उसकी बातें सुनकर भय से कांप उठी । वह घर के अंदर दौड़ती हुई गयी । सवेरे-सवेरे उसने रामेश से कहा "बेटे, लगता है, तुम्हारा दिल रंजनी पर ही टिका हुआ है । तुम उसी को चाहते हो । तुम्हारी इच्छा के अनुसार ही मैं तुम्हारी शादी रंजनी से ही कराऊँगी ।"

एक सप्ताह के अंदर ही रामेश का विवाह रंजनी से संपन्न हुआ ।



प्रसिद्धि

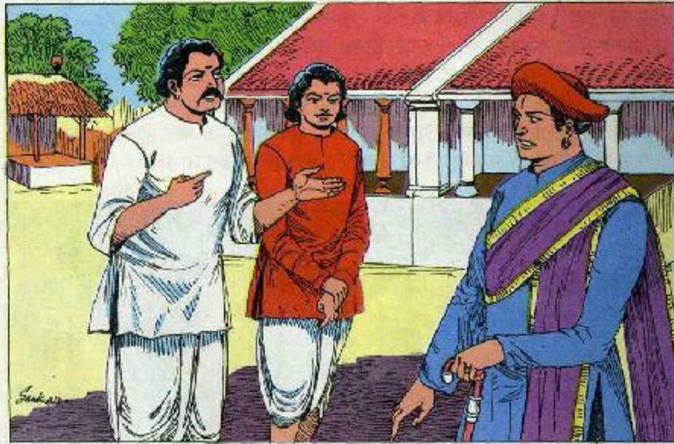
कौशाली नगर के निवासी महेश का एक ही बेटा था। उसका नाम था सुरेश। बहुत ही तकलीफ़ें उठाकर सुरेश को पढ़ाया, किन्तु उसे कोई नौकरी नहीं मिली। महेश को इस बात का बड़ा रंज था।

एक बार जब वह अपने बेटे को लेकर जा रहा था तब आस्थान विद्वान रामशर्मा से उसकी भेंट हुई। उसने बड़े ही प्यार से पूछा, "महेश, कुशल हो ?"

"क्या बताऊँ महोदय। पच्चीस बरस का हो गया, पर मेरे बेटे को अब तक कोई नौकरी नहीं मिली। इसी बात का मुझे बड़ा खेद है। राजा के यहाँ जब आपकी प्रसिद्धि थी, जब राजा आपकी हर बात मानते थे, आपकी जब हर सिफ़ारिश स्वीकार करते थे, तब यह कम उम्र का था। यह सब मेरा दुर्भाग्य नहीं तो और क्या है ?" बड़ी ही निराशा-भरे स्वर में महेश ने कहा।

रामशर्मा सिर हिलाकर चुपचाप वहाँ से चला गया। एक महीने के अंदर ही राजा के आस्थान से आदेश आया कि सुरेश तुरंत नौकरी पर लग जाए। सुरेश ने अपने पिता से कहा "रामशर्मा की ही कृपा से मुझे यह नौकरी मिली। सुना था कि यद्यपि रामशर्मा बड़े ही प्रख्यात व्यक्ति हैं, परंतु वे साधारणतया किसी की सिफारिश नहीं करते। मेरी समझ में नहीं आता कि ऐसे कठोर स्वभाव के व्यक्ति ने मुझे क्यों नौकरी दिलवायी, मेरी सिफ़ारिश क्यों की ?"

इसपर महेश हँस पड़ा और कहा "इसी को कहते हैं लौकिक ज्ञान। मैंने रामशर्मा में यह कहकर संदेह जगा दिया कि राजा आजकल आपकी बातें नहीं मानते। वे अवश्य ही तुम्हें यह नौकरी नहीं दिलाते, क्योंकि उनका स्वभाव ही ऐसा है। यह साबित करने के लिए ही उन्होंने यह नौकरी तुम्हें दिलवायी कि अब भी राजा उनकी बात मानते हैं। इसीलिए अपना गौरव बनाये रखने के लिए उन्हें यह नौकरी दिलवानी ही पड़ी।" - रघुराम



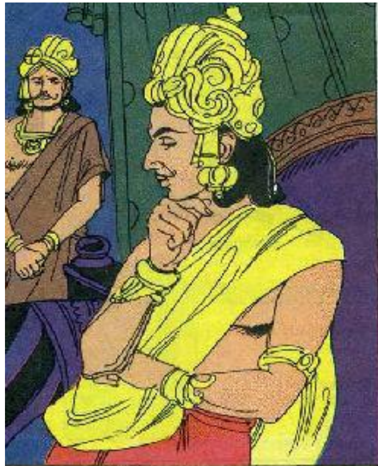


सम्राट अशोक

१८

(कलिंग युद्ध समाप्त हो गया। विजयोत्सव से भरे अशोक ने अपने मित्र यश को कलिंग प्रांत के राजप्रतिनिधि के पद पर नियुक्त करना चाहा। किन्तु एक स्त्री के फेंके बाण से यश तीव्र रूप से घायल हुआ और मर गया। मरते समय यश ने प्रार्थना की कि उस युवती को मौत की सज़ा न दी जाए। मित्र की मृत्यु ने अशोक के हृदय को झकझोरा, वह वर्णनातीत मनोव्यथा का शिकार हुआ। आप्त मित्र की मृत्यु तथा मासूम लोगों पर की गयी हिंसा को लेकर वह तीव्र रूप से सोचने-विचारने लगा। वह चिंताग्रस्त हो गया। उसका हृदय अनिर्वचनीय पीड़ा से भर गया, उसे धिक्कारने लगा।) - बाद

तोशाली नगर के राजभवन से सारे शव हटा दिये गये। वहाँ की भूमि सूखे रक्त के धब्बों से भर गयी। ज़ोर की बारिश हुई, तब जाकर भूमि साफ़ हो गयी। किन्तु राजभवन के एक विशाल मंडप में अकेले ही बैठे अशोक का हृदय तरह-तरह के विचारों से डोल रहा था। अशोक तीव्र रूप से सोचने लगा कि जिस बाण ने यश को मृत्यु-लोक भेजा, उसी बाण का वह शिकार होता तो क्या होता ? बाण से वह बच तो गया, फिर भी उसे लग रहा था मानों उसका प्राण तन छोड़ने के लिए छटपटा रहा हो। उसके जीवन की अति मुख्य घटनाओं में, आपदाओं से भरी गंभीर परिस्थितियों में आप्त मित्र यश उसका सहारा बनकर दृढ़ रूप से खड़ा रहा। वह उसके जीवन का अविच्छिन्न भाग बनकर रहा। ऐसा मित्र जब नहीं रहा तो विजय



पाकर भी आखिर उसने क्या पाया। जीवन में ऐसी विजय का क्या स्थान है ? कितना स्थान है ? विजय का अर्थ ही क्या है ? किसी न किसी दिन हठात् ही सब कुछ शून्य में परिवर्तन होनेवाले इस मानव जीवन का क्या कोई अर्थ है ? उसने कितने ही सपने देखे थे कि यश प्रतिनिधि बनकर इस कलिंग देश पर शासन का भार संभालेगा। एक तरफ राज्य में उसके सैनिकों ने जो आग सुलगायी, वह अब बुझी भी नहीं कि यश का भौतिक देह दयानदी तट पर अग्नि की आहुति बनकर मुट्ठी भर की राख में परिवर्तित हो गया।

सेनापति के वहाँ आते ही अशोक की विचार-शृंखला टूट गयी। उसने पूछा, "दूतों को उज्जयिनी भेजा ?"

"भेजा प्रभु। कलिंग देश पर आपकी अद्भुत व महान विजय का समाचार तथा युद्ध की समाप्ति के उपरांत यश के मरण का विषाद-भरा समाचार महारानी को सूचित करने के लिए दूत भेजे गये"।

"हमारी इस विजय पर वे कदापि संतुष्ट नहीं होंगीं। किन्तु यश की मृत्यु का समाचार उन्हें शोक में डुबो देगा। वह उनका सच्चा भाई था, उनका रक्षक था" शोकमग्न अशोक ने कहा।

"शांति की स्थापना के लिए जो राज्य तत्पर रहता था उसी राज्य पर तुमने निष्कारण ही धावा बोल दिया। इस भयंकर युद्ध में कितने ही स्त्री-पुरुषों ने अपने भाइयों को, बच्चों को, रक्षकों को और पतियों को खो दिया। महाराज, उनके बारे में भी तो ज़रा सोच।" बाहर से एक स्त्री की कंठध्वनि सुनायी पड़ी।

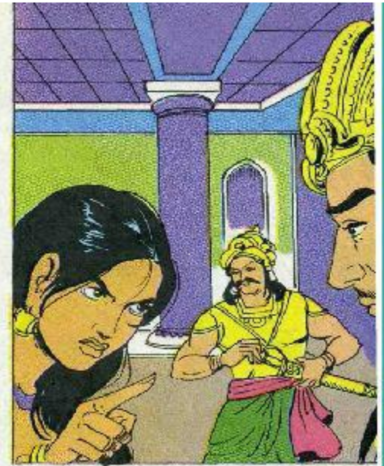
सेनाधिपति ने पलटकर देखते हुए कहा "चुप हो जा पगली।"

यश को अपने बाण का निशाना बनाने वाली वह स्त्री हथकड़ियों सहित आकर अशोक के सामने खड़ी हो गयी।

"इस दुष्ट पापिन स्त्री को आप क्या दंड देना चाहेंगे, यह जानने के लिए इसे आपके सम्मुख ले आया" सेनाधिपति ने कहा।

अशोक आश्चर्य-भरे नेत्रों से उस स्त्री को एकटक देखता रहा।

"मैं मुँह बंद न करूं तो भी मेरा मुँह शाश्वत रूप से बंद कराकर ही रहोगे। जैसा तुम चाहते हो, करो। किन्तु उस कार्य को करने के पहले मेरी बातों को ध्यान से सुनने का कष्ट उठाना। मेरी बातों पर अच्छी तरह सोचना-विचारना। पागल कौन है ? अधिकार-प्राप्ति व राज्य-विस्तार की प्यास बुझाने के लिए लाखों की संख्या में मार डालनेवाले तुम या मैं ? घरों को भस्म करके तृप्त होनेवाले तुम या मैं ? क्या वे पागल हैं, जिन्होंने उनपर किये गये अत्याचारों का विरोध किया और प्रतीकार की भावना से प्रेरित होकर शत्रुओं का, लुटेरों का डटकर सामना किया। कहो, कौन उन्मादी है ? सोचो, खूब सोचो। मैं एक सामंत की बेटी हूँ। तुम्हारे कारण छिड़े इस युद्ध में मेरे पिता, मेरे भाई, मेरी दीदी के पति सबके सब मर गये। मेरी माँ और दीदी से यह दुख सहा नहीं गया। उन दोनों ने आत्महत्या कर ली। यह केवल मेरी व्यक्तिगत विषाद-भरी सच्चाई है। क्या तुमने कभी सोचा, इस प्रशांत हमारे राज्य को कितनी हानि पहुँचायी ? सब दृढ़काय या तो मर गये अथवा क़ैदखाने में ठूँस दिये गये। फलस्वरूप पीढ़ियों दर पीढ़ियों से दूर-दूर प्रांतों में निरातंक चला आता हुआ हमारा व्यापार समाप्त हो गया। श्यामल वर्ण लिये आकाश की ओर देखनेवाले हमारे उपजाऊ खेत अब आगे उसे देख नहीं सकेंगे। अनाथ होकर, रक्षक के अभाव में वे सूख जाएँगे; अपनी सहज शक्ति खो बैठेंगे। राज्य में अकाल नंगा नाचेगा। मरने से जो बचे, वे स्त्रीयाँ, बच्चे, वृद्ध भूख से तड़प-तड़पकर मरेंगे, उन्हें मरना ही पड़ेगा। इन सबके मूल में कौन है ? किसके कारण यह सब कुछ हुआ और होगा ?

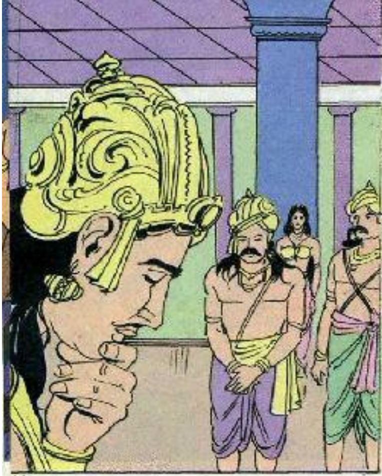


इसका एक ही कारण है। वह है तुम्हारी राज्य-आकांक्षा। तुम्हें तुम्हारे लोग बधाई देंगे, जयजयकार करेंगे। शेष राजा तुम्हें देखकर भय से कांप उठेंगे। यही तो चाहिये न तुम्हें। नीच, निकृष्ट दुराशा के गर्त में गिरकर, महात्वाकांक्षा से प्रेरित होकर तुमने यह युद्ध छेड़ा और यही युद्ध इन सब अनर्थों का मूल है।" वह युवती कुछ और कहने ही वाली थी कि सेनाधिपति चिल्ला उठा "रुक जाओ" और उसने तलवार पर हाथ रखा।

"रुक जाओ सेनाधिपति। उसे बोलने दो" अशोक ने कहा।

सेनाधिपति हतप्रभ रह गया और चुप हो गया।

उस युवती ने फिर से कहना शुरू



किया'' तुम्हारे सैनिकों के हाथों मारे गये मेरे लोग जहाँ गये, वहाँ आज नहीं तो कल ही सही, तुम्हें और तुम्हारे सैनिकों को भी जाना तो पड़ेगा ही। है न ? मैं परलोक के बारे में नहीं जानती। समझ लो, वे सब वहाँ तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं। तब सोचो तो सही, तुमपर क्या गुज़रेगा ? तुम्हारी क्या स्थिति होगी ? अगर वे सब के सब तुमपर टूट पड़ें तो तुम क्या कर सकोगे ? क्या कर पाओगे ? सेनाधिपति व अंगरक्षकों को अपने साथ ले तो नहीं जा सकते। हथियारों को पैना करते समय तुम्हारे सैनिक छिपकर आये और मेरे पिता व भाई को मार डाला। मैं आशा करती हूँ कि वे आगे आकर सबसे पहले उस लोक में तुम्हारा स्वागत करें।''

कहती हुई वह ठठाकर हँस पड़ी। उसकी हँसी से भवन गूँज उठा।

''प्रभु, इस पगली का अंत कर देने की अनुमति दीजिये'' सेनाधिपति ने कहा। अशोक 'न' के भाव में अपना सिर हिलाते हुए उठा और उस युवती के पास आकर कहा ''तुम्हारा क्या नाम है ?''

''कारुवाकी'' उस युवती ने कहा।

''कारुवाकी, तुम्हीं अगर मेरे स्थान पर होती तो क्या करती ?'' अशोक ने पूछा।

''निष्प्रयोजक कीर्ति की आकांक्षा, अमानुषिक रक्त-पिपासा उसी क्षण त्यज देती। जो पाप हुए, उनपर पश्चात्ताप करती, आयुधों का उपयोग छोड़ देती और घोषणा करती कि हिंसा मानव का अति नीच, हेय गुण है'' कारुवाकी ने निर्भय व दृढ़ स्वर में बड़े ही प्रभावशाली ढंग से कहा।

इतने में अशोक के प्रधान अंगरक्षक ने वहाँ आकर कहा ''महाराज, उज्ञयिनी से दूत आया''।

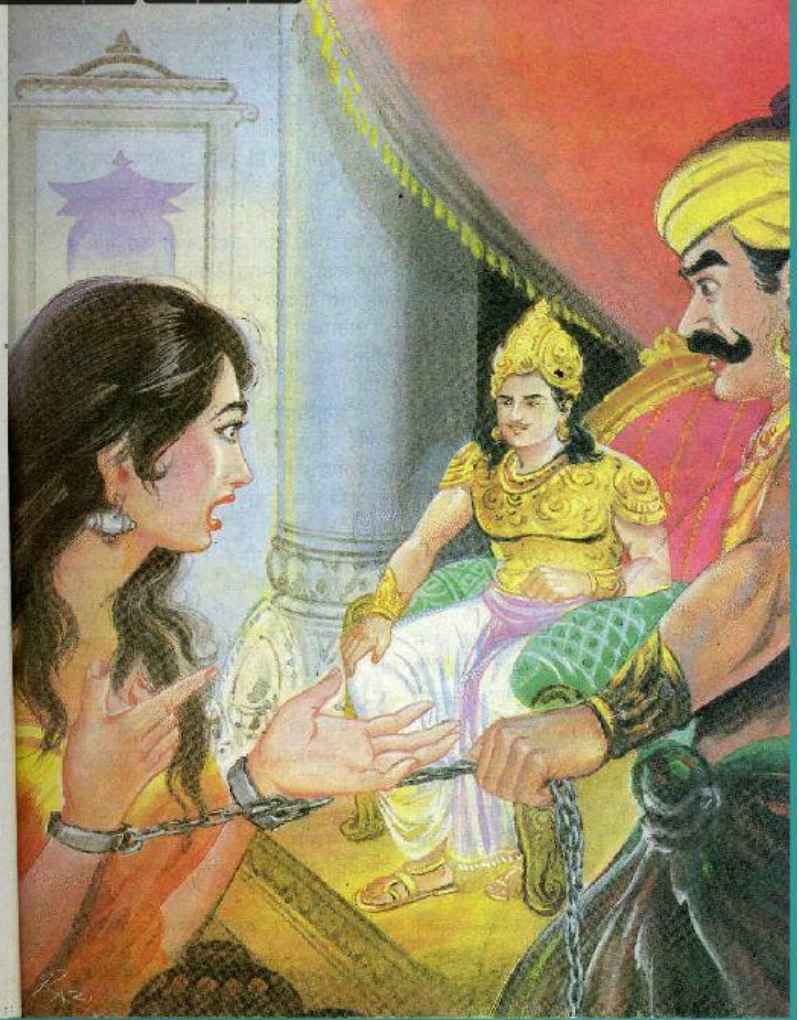
''अंदर ले आओ'' आशोक ने कहा।

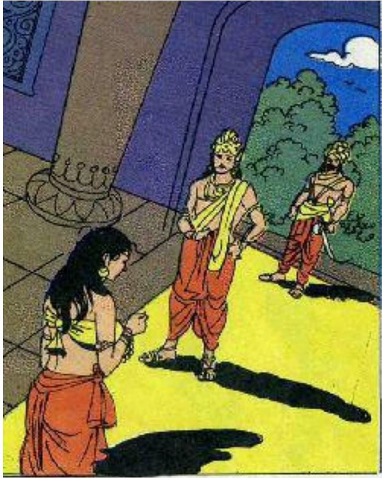
बाहर गया अंगरक्षक दूसरे ही क्षण दूत सहित अंदर आया।

''श्रीकर, सही समय पर आये। उज्ञयिनी में महारानी और बच्चे सकुशल हैं न ?'' अशोक ने पूछा।

''प्रभु क्षमा करें। मैंने कल्पना तक नहीं की कि ऐसी बुरी ख़बर लेकर मुझे आपके पास आना पड़ेगा'' दूत श्रीकर ने सिर झुकाकर कहा।

अशोक ने इस भाव से सिर हिलाकर पूछा कि बताओ, तुम्हें जो बताना है।





"महारानी विदीशादेवी स्वर्ग सिधारीं ।" गद्‌गद्‌कंठ से श्रीकर ने कहा ।

अशोक ने दिग्भ्रांत होकर कहा "क्या कह रहे हो तुम ?"

"प्रभु, व्यापारिक कार्यों पर यहाँ आये हुए उज्ञयिनी के कुछ व्यापारियों ने प्रथम दिन हुए भीकर युद्ध को आँखों देखा । वे डर गये और उज्ञयिनी भाग गये । उन्होंने यहाँ की गंभीर स्थिति, भयंकर घटनाओं तथा यहाँ की प्रजा पर होते हुए अत्याचारों पर प्रकाश डाला, जिसे देखा, जिससे मिला, पूरा-पूरा बताया । वह विषय महारानी को भी मालूम हुआ । उन्होंने उन व्यापारियों को बुलवाया और पूरे विषय की जानकारी पायी । जो हुआ, जो देखा, अब कुछ उन्होंने महारानी को बता दिया । अपने पति के इन दुष्कर्मों पर वे बहुत दुखी हुई। उन्होंने व्रत लेने का निश्चय किया । मंदिर में प्रवेश किया और निश्चल ध्यान में मग्न हो गयीं । लगातार तीन दिनों तक न ही कुछ खाया न ही पिया । चौथे दिन वे बेहोश हो गयीं और शनैः शनैः मृत्यु की गोद में सो गयीं ।"

थोड़ी देर तक वहाँ चुप्पी छा गयी । कारुवाकी अकस्मात् ठठाकर हँसने लगी । वह हँसी राजभवन में प्रतिध्वनित हो उठी ।

सेनाधिपति ने गरजकर कहा "क्या यह हँसने का समय है ? तुम्हें शरम नहीं आती ?"

"सेनाधिपति, मेरे जीवन में हँसी या रुलाई का कोई अंतर नहीं । वह कभी का मिट गया । मेरी दृष्टि में उनका कोई अर्थ ही नहीं । जब चाहूँ, हँस सकती हूँ, जब चाहूँ, रो सकती हूँ" कहकर कारुवाकी फिर से हँसने लगी ।

सेनाधिपति ने कहा "इस पापिन को खींचकर ले जाऊँगा और मार डालूँगा"।

"नहीं, पहले उसकी हथकड़ियाँ खोल दो और इसे छोड़ दो" अशोक ने आज्ञा दी ।

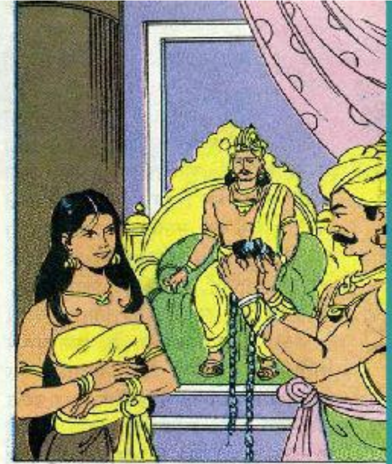
"यश की हत्या करनेवाली को छोड़ दूँ ?" सेनाधिपति ने आश्चर्य-भरित होकर पूछा ।

"हाँ, यश ने उसे माफ़ कर दिया । उसने मुझपर बाण न चलाकर उसपर चलाया । इसके लिए उसने कृतज्ञता स्वरूप यह काम करने को कहा । यश की अंतिम इच्छा का हमें आदर करना चाहिये" अशोक ने गंभीरतापूर्वक कहा ।

सेनाधिपति ने जैसे ही हथकड़ियाँ खोल दीं, कारुवाकी ने कहा "राजन्, यश की अंतिम इच्छा ही इस सत्य का साक्षी है कि वह एक महोन्नत व्यक्ति था । मेरे परिवार को, मेरे बंधु-मित्रों को, मेरे राज्य की नादान प्रजा को तुमने मरवा डाला । प्रतिशोध लेने के उद्देश्य से ही तुम्हें अथवा यश को मारने की मेरी तीव्र इच्छा थी । इसीलिए मैंने बाण चलाया भी । बाण चलाने के पहले पता नहीं, क्यों मुझमें उस क्षण यह विचार आया कि तुम्हें छोड़ दूँ, तुम पर बाण न चलाऊँ । शायद यह विधि का निर्णय होगा । तुम्हारे द्वारा इस संसार की शायद बहुत बड़ी मात्रा में भलाई होगी ।"

"कलिंग की प्रजा मुझे ईर्ष्यालु, स्वार्थी, महात्वाकांक्षी, क्रूर कहती है और मुझसे घृणा करती है । भला मैं संसार की भलाई क्या करूँगा, कैसे करूँगा ?" अशोक ने दीन स्वर में पूछा ।

"राजा, हर मनुष्य में बुराई के साथ-साथ अच्छाई भी होती है । क्या यश दारुण हत्याओं का कारक नहीं ? फिर भी जब वह मृत्यु के निकट जा रहा था तब क्या उसमें निहित उत्तम मानव-स्वभाव प्रकट नहीं हुए ? अब जो अशोक कलिंग की प्रजा की दृष्टि में क्रूर व अत्याचारी है, हो सकता है, वह धर्ममूर्ति व निष्कलंक अशोक के रूप में सबके आदर-सम्मान का पात्र बने । शांत होकर सोचियेगा ।" कहकर कारुवाकी ने अशोक को सविनय नमस्कार किया और भवन से बाहर चली गयी ।



युद्ध के दौरान जो क़ैद किये गये, छोड़ दिये गये । अशोक ने सेनाधिपति को तोशाली में ही रहने दिया और स्वयं उज्ञयिनी जाने निकला । वहाँ पहुँचने के बाद विदीशा की बुझी चिता को देखकर सजल नयनों से मौन हो हार्दिक सहानुभूति प्रकट की । पुत्र महेंद्र और पुत्री संघमित्रा उसके दोनों ओर खड़े थे ।

"तुम्हारी माँ ने मुझ पर जो विश्वास रखा, उसे निभाने में मैं असफल हुआ ।" बड़े ही दर्द-भरे स्वर में उसने अपने बच्चों से कहा ।

"आप उसका सही प्रायश्चित्त कर सकते हैं । हर दुष्कर्म की एक निष्कृति होती

है। तथागत बुद्ध की दया सदा आप पर होगी।" कहता हुआ गुरुदेव उपगुप्त वहाँ आया।

उस क्षण से अशोक के जीवन में नूतन अध्याय प्रारंभ हुआ। गुरुदेव के ज्ञान-बोध से वह आकर्षित हुआ, मुग्ध हुआ। उसने बौद्ध धर्म स्वीकार किया। अहिंसा को उसने अपना परम धर्म माना। राज्य में हिंसा का निषेध किया। राज्य भर में शांति और अहिंसा स्थापित हों, इसके लिए जगह-जगह पर धर्म-रक्षकों की नियुक्ति की।

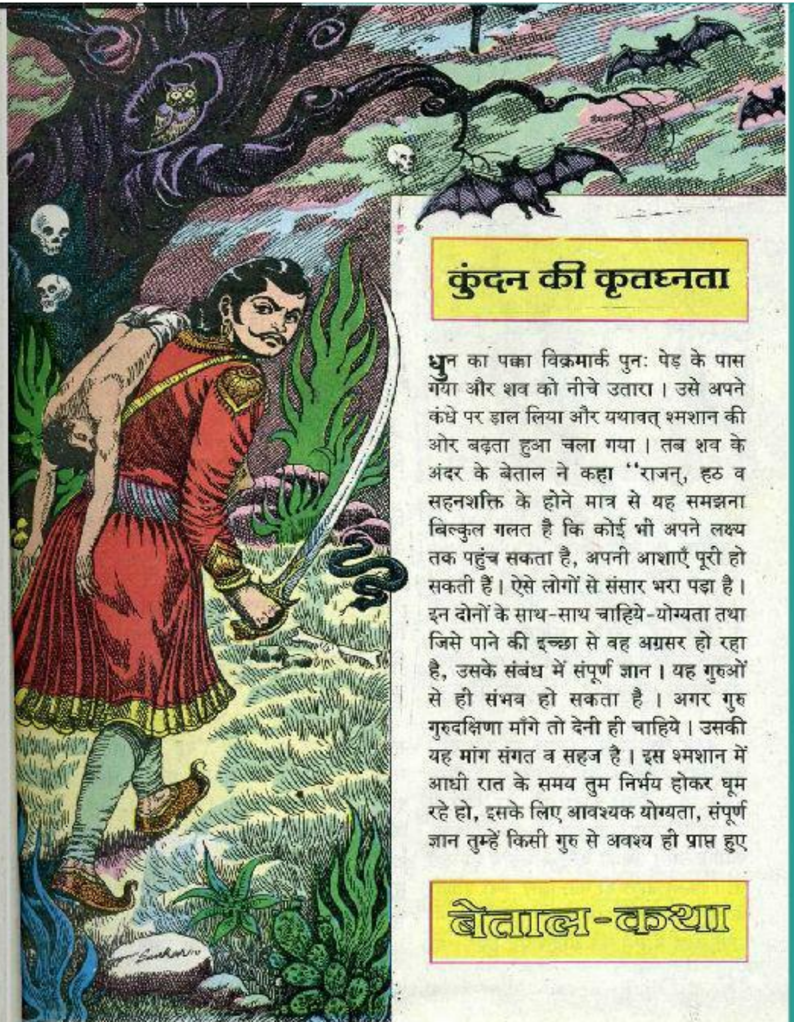
अपनी महत्वाकांक्षा के फलस्वरूप शिथिल हुए तोशाली क़िले के सामने के शैली पर्वत पर अपने दुष्कर्मों पर दुख प्रकट करते हुए शिला-शासन लिखवाया जो यों था "केवल पशु-बल से, तलवार की नोक के बल पर किसी भी प्रकार की विजय नहीं साध सकते। अच्छे कर्म करके, प्रजा के हृदयों को संतुष्ट करने पर ही शाश्वत विजय संभव है।" यों उसने अपने अनुभवों के आधार पर जो सत्य जाने, ग्रहण किये, उन्हें शिलाफलक पर छिलवाया। अपने शांति-संदेश को तद्वारा बताया।

इसी प्रकार के संदेशों को राज्य-भर में शिलाफलकों पर छिलवाया। पड़ोसी राज्यों में, सिरिया, ईजप्ट जैसे दूर देशों में बौद्ध धर्म के प्रचारकों को भेजा। पुत्र महेंद्र और पुत्री संघमित्रा को श्रीलंका भेजा। उनके प्रयत्नों के फलस्वरूप वहाँ के राजा और प्रजा ने बौद्ध धर्म स्वीकार किया।

बहुत ही बड़े सम्राट के नाम से अशोक जगत्-विख्यात हुआ। उसकी विजयें या उसके अधिकार मात्र इसके कारण नहीं हैं। इसके कारण हैं -मानव जाति पर दर्शायी उसकी अपार करुणा तथा अचंचल विश्वास। संसार में कितने ही राजाओं ने कितने ही बड़े-बड़े राज्यों की स्थापना की। किंतु एकमात्र अशोक ही वह राजा था, जिसने समस्त मानव जाति को ज्ञान प्रदान किया और चाहा कि सभी मानव विवेकपूर्ण व्यवहार करते हुए जीवन-यापन करें; उसे धन्य बनाएँ। इस महोन्नत लक्ष्य की प्राप्ति के लिए उसने अपना जीवन व संपदाएँ अर्पित कीं। निस्संदेह अशोक उत्तम व चिरस्मरणीय राजा है।

(समाप्त)

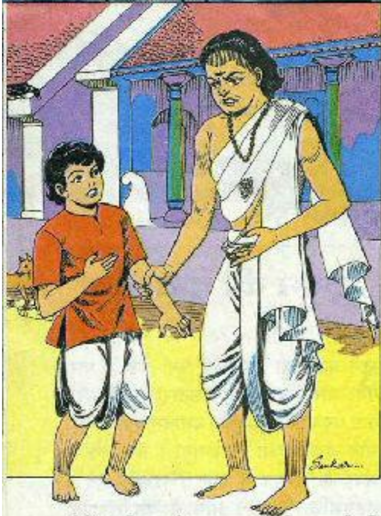




कुंदन की कृतघ्नता

धुन का पक्का विक्रमार्क पुनः पेड़ के पास गया और शव को नीचे उतारा। उसे अपने कंधे पर डाल लिया और यथावत् श्मशान की ओर बढ़ता हुआ चला गया। तब शव के अंदर के बेताल ने कहा "राजन्, हठ व सहनशक्ति के होने मात्र से यह समझना बिल्कुल गलत है कि कोई भी अपने लक्ष्य तक पहुंच सकता है, अपनी आशाएँ पूरी हो सकती हैं। ऐसे लोगों से संसार भरा पड़ा है। इन दोनों के साथ-साथ चाहिये-योग्यता तथा जिसे पाने की इच्छा से वह अग्रसर हो रहा है, उसके संबंध में संपूर्ण ज्ञान। यह गुरुओं से ही संभव हो सकता है। अगर गुरु गुरुदक्षिणा माँगे तो देनी ही चाहिये। उसकी यह मांग संगत व सहज है। इस श्मशान में आधी रात के समय तुम निर्भय होकर घूम रहे हो, इसके लिए आवश्यक योग्यता, संपूर्ण ज्ञान तुम्हें किसी गुरु से अवश्य ही प्राप्त हुए

बेताल-कथा



होंगे। किन्तु देखा गया है कि कार्य की सफलता के बाद शिष्य कृतघ्नतापूर्वक व्यवहार करते हैं। वे गुरु को भूल जाते हैं। उन्हें लगता है कि अपनी ही बुद्धि तथा प्रयत्नों के बल पर उन्होंने सफलता पायी। उदाहरणस्वरूप तुम्हें कुंदन नामक एक कृतघ्न की कहानी सुनाऊँगा।" फिर वह यों कहने लगा।

कुंदन एक ग़रीब किसान का बेटा था। वह लंबी अवधि के बाद पैदा हुआ, इसलिए उसके माता-पिता ने बड़े ही लाड़-प्यार से उसे पाला-पोसा। वह पढ़-लिख नहीं पाया, क्योंकि उसमें उसकी कोई अभिरुचि ही नहीं थी। किन्तु बहुत ही पढ़े-लिखे तथा पंडितों के चमत्कार-पूर्ण बातें सुनते-सुनते उसे भी उसी तरह बोलने की आदत पड़ गयी। यों वह दस साल का हो गया।

एक दिन वह कुछ और बालकों के साथ गेंद खेल रहा था। उस समय रामशास्त्री नामक एक पंडित उस तरफ़ से गुज़र रहा था। गेंद उसे जा लगी और उसके सफ़ेद कपड़ों पर काले धब्बे पड़ गये।

नाराज़ होते हुए रामशास्त्री ने पूछा "कौन है वह, जिसने यह काम किया?" कुंदन के अलावा सब बालक वहाँ से भाग गये।

रामशास्त्री ने उसका हाथ पकड़ लिया और कहा "तुम नटखट ही नहीं बल्कि तुम्हें डर छू भी नहीं गया।" हुँकारते हुए उसने कहा।

कुंदन ने निर्भीक होकर कहा "डरना हो तो सूर्य से डरना है। शीतल चांदनी बिखेरनेवाले चाँद से भला क्यों डरें?"

रामशास्त्री ने फ़ौरन उसका हाथ छोड़ दिया और कहा "मैं सूर्य हूँ। किन्तु तुमने कैसे समझ लिया कि मैं चंद्र हूँ।"

"महाशय, सूर्य को तीक्ष्ण दृष्टि से देख नहीं सकते। इस कारण उसमें दाग़ भी हों तो दिखायी नहीं देते। चंद्र में दाग़ साफ़-साफ़ दिखायी देता है। आपको भी दिखायी देगा।" कुंदन ने चमत्कारपूर्ण ढंग से बात की।

उसके चमत्कार पर रामशास्त्री मन ही मन मुस्कुराया और कहा "यह दाग़ सहज नहीं है। तुम्हारे कारण यह हुआ। तुम्हें इसका जवाब देना होगा। "महोदय, मैंने कहा, आप चंद्र के समान हैं। आगे से आप शीतल चाँदनी फैलाते ही रहेंगे। इसके लिए मुझे क्या उत्तर देना होगा, आप ही उपाय सुझायियेगा" कुंदन ने सविनय कहा।

"तुमने मुझे चांद बनाया, अतः मेरी

चाँदनी तुम्हें ही सहनी होगी। हर दिन सायंकाल मेरे घर आना। तुम पर ज्ञान की चाँदनी बरसाऊँगा।" रामशास्त्री ने हँसते हुए कहा।

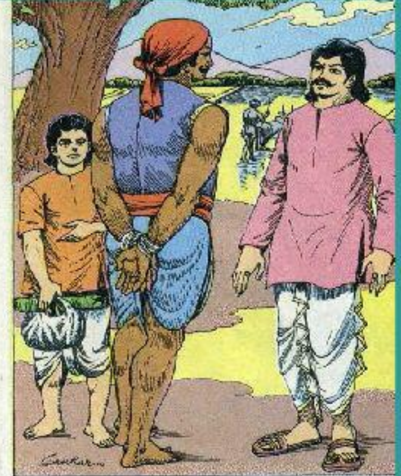
यों कुंदन, रामशास्त्री का शिष्य बना। एक दिन जब खेत में काम पर लगे पिता के लिए खाना ले जा रहा था, तब दो आदमियों को आपस में झगड़ते हुए देखा। उनमें से एक के हाथ में चाकू था। दूसरा, जिसके हाथ में चाकू नहीं था, वह इस गाँव का सबसे बहुत संपन्न धनगुप्त था।

कुंदन ने भोजन की गठरी ज़मीन पर रख दी और उस आदमी से भिड़ गया, जिसके हाथ में चाकू था। बड़ी ही सुगमता से चाकू छीन लिया। फिर धनगुप्त व कुंदन ने उस आदमी को रस्सी से बांध दिया।

"तुमने आज मेरी जान बचायी। कहो, तुम्हें क्या चाहिये। मैं अवश्य तुम्हारी इच्छा पूरी करूँगा।" धनगुप्त ने कहा।

"जब ज़रूरत पड़ेगी, ज़रूर पूछूँगा। हमारे गाँव में चोरों का यों घुसना अच्छी बात नहीं। दिन दहाड़े आप पर हमला कर दिया इसने। ऐसी घटनाएँ फिर से न घटें, इसके लिए यह ज़रूरी है कि हमारे गाँव में कुछ रक्षक सिपाही नियुक्त किये जाएँ, जो चोरों को गाँव में घुसने से रोक सकते हैं। आप बड़े आदमी हैं। आप चाहें तो फ़ौरन ऐसा इंतज़ाम करने की क्षमता रखते हैं। यह आपके लिए कोई असाध्य कार्य नहीं है।" कहकर कुंदन वहाँ से चला गया।

उस दिन शाम को ग्रामाधिकारी से कुंदन को बुलावा आया। उसके आते ही ग्रामाधिकारी ने कहा "आज तुमने जिसे पकड़



लिया, वह कोई साधारण चोर नहीं है। आसपास के सब गाँवों को डर से कंपा देनेवाला बड़ा लुटेरा गंगिया है। ऐसे लुटेरे को तुमने पकड़कर साबित किया कि तुम बड़े ही शक्तिशाली हो। बताना कि युद्ध-विद्याओं की शिक्षा तुम किससे प्राप्त कर रहे हो?" कुंदन ने स्पष्ट बताया कि उसने रामशास्त्री से शास्त्र सीखे और युद्ध-विद्याओं के बारे में वह कुछ जानता ही नहीं।

"किन्तु गंगिया कह रहा था कि जो पकड़ तुम जानते हो, उसे भी मालूम नहीं।" आश्चर्य प्रकट करते हुए ग्रामाधिकारी ने कहा।

उसने कहा भी कि वह उसे फ़ौरन ग्रामसंरक्षक के पद पर नियुक्त करेगा।

कुंदन ने उसे प्रणाम करते हुए कहा "मैंने



गंगिया को पकड़ा ज़रूर। लेकिन युद्ध-विद्या से इसका कोई संबंध नहीं। मेरी बात मानिये। मैं युद्ध-विद्या से बिल्कुल अपरिचित हूँ। जो हुआ वह केवल संयोग है। बिना किसी प्रशिक्षण के इस जिम्मेदारी को संभालना मुझसे नहीं होगा और यह गलत भी है।''

ग्रामाधिकारी ने मुस्कुराकर कहा ''मैं युद्ध-विद्याओं में निपुण हूँ। ग्रामाधिकारी होने के नाते मुझपर कई जिम्मेदारियाँ हैं। मैं तुम्हें गाँव के संरक्षक के पद पर नियुक्त करता हूँ। हर दिन प्रातःकाल ही आ जाना और मुझसे युद्ध-विद्याएँ सीखना।''

उस दिन से कुंदन ग्रामाधिकारी का शिष्य बना। युद्ध-विद्याएँ भी उसे बड़ी ही आसक्ति-दायक लगीं। गाँव के चारों ओर कांटों का घेरा लगाया। एक जगह पर गाँव के प्रवेश-द्वार का प्रबंध हुआ। कुंदन और दो युवकों के साथ वहाँ रक्षक का काम संभाल रहा था।

जब से वह गाँव का रक्षक बना तब से गाँव के प्रवेश-द्वार पर ही रामशास्त्री उसे पढ़ाता रहता था।

यों समय बीतता गया। कुंदन अब बीस साल का हो गया। उसने सब शास्त्रों का अध्ययन किया। सब प्रकार की युद्ध-विद्याओं में निष्णात हुआ। उसने चाहा कि दोनों गुरुओं को गुरुदक्षिणा दूँ।

''अपने शक्ति-सामर्थ्यों के आधार पर जब खूब धन कमाने लगोगे तब जितना धन तुम देना चाहोगे, हमें दो। तब तक हमें गुरुदक्षिणा देने की कोई आवश्यकता नहीं'' रामशास्त्री और ग्रामाधिकारी ने कहा।

एक बार राजधानी नगर से कुंदन का एक रिश्तेदार उसके यहाँ आया। उसने कुंदन की शक्ति व युक्ति के बारे में बहुत सुना था। उसने उससे कहा ''एक महीने के अंदर राजधानी में एक विचित्र स्पर्धा होनेवाली है। वहाँ शास्त्र व शस्त्र-विद्याओं में स्पर्धाएँ होंगीं। दोनों स्पर्धाओं के विजेताओं को अलग-अलग पुरस्कार दिये जाएँगे। उपरांत जो शास्त्र-विद्याओं में प्रथम आयेगा, उसे शस्त्र-विद्याओं में प्रथम आये विजेता से स्पर्धा में भाग लेना होगा। इस स्पर्धा के विजेता को अद्भुत पुरस्कार दिया जायेगा। मेरी दृष्टि में यह स्पर्धा बड़ी ही विचित्र है। क्योंकि इन दोनों क्षेत्रों के विजेताओं के बीच आज तक कोई स्पर्धा नहीं हुई। जहाँ तक मुझे मालूम है, किसी ने ऐसी स्पर्धा के बारे में अब तक सुना भी नहीं होगा। परंतु इस स्पर्धा में भाग लेने के पहले आवेदक को दस हज़ार अशर्फ़ियाँ प्रवेश-शुल्क के रूप में भरनी होंगीं।''

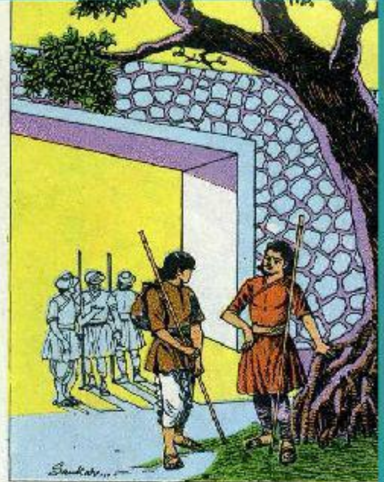
कुंदन चाहता तो था कि इस स्पर्धा में भाग लूँ, पर प्रवेश-शुल्क के बारे में सुनते ही वह निराश हो गया।

इन स्पर्धाओं के बारे में धनगुप्त ने भी सुना। वह कुंदन से मिला और कहा ''दस हज़ार अशर्फ़ियाँ मैं दूँगा। तुम राजधानी जाओ और स्पर्धाओं में भाग लो। तुम अगर जीत जाओगे तो मैं जो चाहूँगा, तुम्हें देना होगा।''

''अगर आपकी मांग मेरी शक्ति के बाहर न हो तो अवश्य पूरी करूँगा'' कुंदन ने कहा।

धनगुप्त ने उसकी बात मान ली। कुंदन राजधानी गया। शास्त्र-विद्याओं की स्पर्धा में भाग लिया और प्रथम आया। फलस्वरूप उसे लाख अशर्फ़ियाँ पुरस्कार के रूप में उपलब्ध हुईं। शस्त्र-विद्याओं में भी वही प्रथम आया और एक लाख अशर्फ़ियाँ उसे ही प्राप्त हुईं। चूँकि दोनों स्पर्धाओं में एक ही व्यक्ति प्रथम आया, इसलिए होड़ की आवश्यकता नहीं पड़ी।

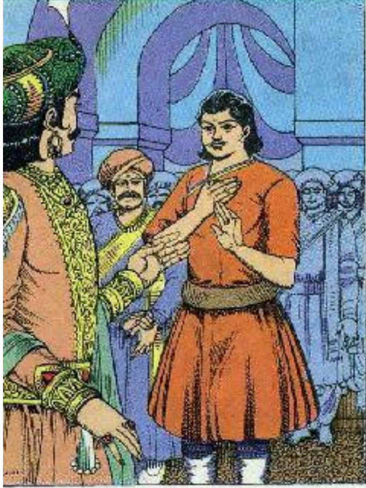
तब उस देश के राजा ने कहा ''इस बात की मुझे खुशी हो रही है कि यह विचित्र स्पर्धा यों बिना किसी समस्या के सफलतापूर्वक संपूर्ण हुई। इन स्पर्धाओं के पीछे एक सबल कारण है। मैं अपनी इकलौती पुत्री सुनंदा के लिए योग्य वर ढूँढ रहा हूँ। स्वयंवर के अवसर पर अन्य देशों के राजकुमारों को निमंत्रित करने का मेरा उद्देश्य नहीं है। मैं चाहता हूँ कि हमारे ही देश के सब प्रकार से समर्थ व योग्य युवक को चुनूँ और एक नया संप्रदाय शुरु करूँ। मैं चाहता



था कि जिन्हें अपने सामर्थ्य पर अटल विश्वास है, वें ही इस स्पर्धा में भाग लें। इसीलिए मैंने ठोस प्रवेश-शुल्क भी घोषित किया। मुझे पूरा विश्वास है कि कुंदन से सुनंदा का विवाह आप सब को सम्मत होगा।'' राजा की घोषणा सुनते ही प्रजा ने आनंद व उत्साह से अपनी स्वीकृति दी।

राजकुमारी सुनंदा व कुंदन का विवाह-मुहूर्त निश्चित हुआ। कुंदन के माता-पिता, रामशास्त्री धनगुप्त आदि को निमंत्रण-पत्र भेजे गये। एक दिन पहले वे सब राजधानी पहुँचे।

रामशास्त्री व ग्रामाधिकारी को कुंदन ने पुरस्कार-स्वरूप प्राप्त पूरी रक़म गुरुदक्षिणा के रूप में दी और कहा ''आपकी कृपा व आशीर्वादों के कारण ही मैं इतना बड़ा आदमी



बन सका।"

रामशास्त्री ने उसका दिया धन न लेते हुए कहा "तुम राजा होनेवाले हो। तब मुझे राजा के आस्थान का पंडित बनाना। वही मेरी गुरुदक्षिणा होगी।"

कुंदन उसकी मांग पर चकित रह गया। उसने कहा "आस्थान-पंडित की नियुक्ति के लिए कुछ निर्दिष्ट पद्धतियाँ होती हैं। उनके अनुसार आपको वह स्थान मिल गया तो ठीक है। मैं तो अपनी तरफ़ से भरसक प्रयत्न करूँगा। किन्तु गुरुदक्षिणा के साथ इस पद का संबंध न जोड़ियेगा। ये लाख अशर्फ़ियाँ स्वीकार कीजिये।"

रामशास्त्री ने नाराज़ी से कहा "मूर्ख, गलियों में बेकार घूमते-फिरते थे। तुम्हें मैंने शास्त्र सिखाये। मेरे ही कारण आज तुम इतने बड़े हुए। मेरी ही परीक्षा लेने की बात कर रहे हो? तुम कृतघ्न हो" कहता हुआ वहाँ से तेज़ी से चला गया।

ग्रामाधिकारी की मांग थी कि उसे गुरु दक्षिणा के रूप में सेनाधिपति का पद दिया जाए। कुंदन ने वही बात उससे भी कही, जो उसने रामशास्त्री से कही थी। ग्रामाधिकारी भी उसे कृतघ्न कहता हुआ चला गया।

अब रहा धनगुप्त। वह चाहता था कि कुंदन उसकी बेटी से शादी करे। कुंदन ने मृदुल स्वर में उसके प्रस्ताव का तिरस्कार किया। वह भी उसे कृतघ्न कहता हुआ वहाँ से चला गया।

बेताल ने विक्रमार्क को कुंदन की कहानी सुनाने के बाद कहा "राजन्, कुंदन अहंकारी हो गया, वह घमंडी हो गया, क्योंकि शीघ्र ही वह राजा बननेवाला है, राज-सिंहासन पर आसीन होनेवाला है। इसी अहंकार व घमंड के तैश में आकर उसने उन गुरुओं का भी अपमान किया, जिनके कारण आज वह इतना बड़ा आदमी बन सका। मेरी दृष्टि में भी वह सौ फ़ी सदी कृतघ्न है। उसने उस धनगुप्त के प्रस्ताव का भी तिरस्कार किया जिसने उसे प्रवेश-शुल्क के लिए भारी रक़म दी। अगर उस दिन वह रक़म न देता तो यह सब कुछ हुआ ही न होता। गाँव में ही रक्षक बनकर साधारण ज़िन्दगी बिताता और सड़ता रहता। क्या उसकी बेटी से शादी के लिए राजी न होना कृतघ्नता नहीं है? मेरे इन संदेहों के समाधान जानते हुए भी नहीं बताओगे तो तुम्हारे सिर के टुकड़े-टुकड़े हो जाएँगे।"

विक्रमार्क ने कहा "महाराज ने ही स्वयं अपनी पुत्री के लिए वर नहीं चुना। वह जिसे चाहता था, उससे निराटंक बेटी का विवाह करा सकता था। किन्तु इसके लिए उसने स्पर्धाओं का आयोजन किया और समर्थ युवक को अपना दामाद चुना। इन स्पर्धाओं में जीतने के कारण ही कुंदन राजकुमारी से शादी करनेवाला है और राजा बननेवाला है। किन्तु इसका यह मतलब नहीं कि जिन्हें वह चाहता है, उन्हें ऊँचे-ऊँचे पदों पर बिठाये। समर्थ व सुयोग्य ही आस्थान पंडित हो सकते हैं। उसके लिए आवश्यक नियमों का पालन करना होगा। उसने यही सच्चाई अपने गुरुओं से भी बतायी। उन्हें अपने-अपने सामर्थ्य पर विश्वास नहीं। हाँ, यह सच है कि उन्हीं की वजह से कुंदन इतना बड़ा आदमी बन पाया, इतने उन्नत स्थान को प्राप्त कर सका, किन्तु इस सत्य को हम न भूलें कि इसके पीछे उसका सामर्थ्य व आत्म-विश्वास भी हैं। अगर उसके गुरु सचमुच ही योग्य व समर्थ हों तो भला उसपर निर्भर होने की क्या आवश्यकता है? वास्तव में गुरु शिष्य को शिक्षा प्रदान कर सकता है, लेकिन उसे बड़ा नहीं बना सकता। बड़ा बनने के लक्षण स्वतः शिष्य में होने चाहिये। यह समझना ग़लत है कि शिष्य अगर महान हो तो गुरु उससे भी महान होगा। अब रही धनगुप्त की बात। स्पर्धा के पहले ही अगर वह कुंदन से पूछता कि तुम मेरी बेटी से शादी करो तो बात कुछ और होती। शायद उसी समय वह अपनी सम्मति देता। किन्तु राजकुमारी से उसका विवाह पक्का हो जाने के बाद धनगुप्त का प्रस्ताव कोई अर्थ नहीं रखता। यह सरासर उसकी ग़लती है। अब उसकी दी दस हज़ार अशर्फ़ियों की ही बात लें। लुटेरे गंगिया से जब कुंदन ने उसे बचाया तो उसने वचन दिया था कि जो भी तुम मांगोगे, जब भी तुम मांगोगे, तब मैं तुम्हारी मांग पूरी करूँगा। दस हज़ार अशर्फ़ियाँ उसने आवश्यकता पड़ने पर कुंदन को दीं और यों उसने अपना ऋण चुका दिया। इन सभी कारणों को दृष्टि में रखते हुए मेरा विचार है कि कुंदन कृतघ्न है ही नहीं।"

राजा के मौन-भंग में सफल बेताल शव सहित ग़ायब हो गया और पेड़ पर जा बैठा।

आधार - श्रीकांत अवस्थी की रचना



विश्वास

चंदूलाल सेठ नामक व्यापारी के यहाँ चाँद नामक एक लड़का काम करता था। उसका समझना था कि जितनी मेहनत वह कर रहा है, उसके अनुपात में उसे वेतन मिल नहीं रहा है। वह भूषण नामक एक और व्यापारी के यहाँ गया और नौकरी मांगी।

भूषण ने चाँद की बातें सुनीं और कहा "ठीक है, समय आने पर विचार करूँगा।" वह अंदर गया और दस रुपयों का बंडल लेकर बाहर आया। उसे चाँद के हाथ में देते हुए उसने कहा "ये हज़ार रुपये हैं। चंदूलाल सेठ को दे आना।"

चाँद ने रुपये लिये और आधे घंटे के अंदर लौट आया। भूषण ने उससे पूछा "पूरे के पूरे हज़ार रुपये उसे दे दिये ?" चाँद ने कहा कि हाँ, मैंने दे दिये। भूषण ने नाराज होकर कहा "मैंने दस रुपये ज़्यादा दिये। तुमने उन दस रुपयों को हड़प लिया और चंदूलाल सेठ को हज़ार रुपये ही दिये। तुम्हें मेरे यहाँ काम नहीं मिलेगा।"

"महाशय, आप ही ने यह कहकर रुपये दिये कि ये हजार रुपये हैं। मैं आपके सामने वह रक़म गिनना नहीं चाहता था। मैं अगर गिनता तो इसका यह मतलब हुआ कि आप पर मुझे विश्वास नहीं। इसलिए मैं आपकी आज्ञा का पालन करने के लिए चुपचाप चला गया। पर जब मैंने सेठ को रक़म दी तब रुपये गिने। दस रुपये ज़्यादा थे। मैं आपको दस रुपये लौटाना चाहता था। किन्तु मुझे लगा कि आपको मुझपर संदेह है, इसीलिए आपने जान-बूझकर ऐसा किया। विश्वास जितना आपके लिए प्रधान है, उतना ही प्रधान है मेरे लिए भी। मुझे यहाँ काम करना नहीं है।" कहकर वह पलटकर यह कहता हुआ चला गया कि आपने जो काम सौंपा, उसके लिए ये दस रुपये बराबर हो गये।

- ईश्वर महाजन



काबेरी के तट पर – II

जल का दोहन

वर्णन : जयंती महालिंगम्   चित्र : गौतम सेन

कोडगु की सीमा से 30 कि. मी. आगे, कावेरी के बायें तट पर रामनाथपुर में एक विशाल चट्टान नदी में से सिर उठाये खड़ी है. उसके ऊपर एक शिवालय है, जिसे स्थानीय लोग 'गोगर्भ' कहते हैं. ऐसी मान्यता है कि रावण को मारने के बाद ब्रह्महत्या का महापाप धोने के लिए श्रीराम ने इस चट्टान के ऊपर शिवलिंग की अर्चना की थी. यह भी विश्वास है कि इस मंदिर की प्राणप्रतिष्ठा आदि शंकराचार्य ने की थी.



रामनाथपुर का मंदिर

जरा आगे कट्टेपुरा गांव में एक पुराना बांध कावेरी के पानी के बहाव को धीमा करता है. बांध का नाम *जंगमकट्टे* है. इसका निर्माण कई सौ साल पहले लिंगायत संप्रदाय के जंगम साधुओं ने किया था. 1.2 मीटर ऊंचे पत्थरों को सावधानी से तराश कर एक पर एक चिन दिया गया है. कावेरी का पानी इनकी झिर्रियों में से रिस कर धीरे-धीरे निकलता है. मानो नदी को उन स्थापत्य में अशिक्षित साधुओं के निर्माण-कौशल पर विस्मय हो रहा हो.

चुंचनकट्टे पर कावेरी नदी 20 मीटर की ऊंचाई से कूदती है. इस जगह का नाम चुंचा नाम के आदिवासी सरदार के नाम पर से पड़ा है, जिसने यहां पर एक बांध बनवाया था. नदी यहां पर एक तंग घाटी में से गुजरती है, जिसे धनुष्कोटि कहा जाता है. यह भारत के दक्षिणी छोर पर के सुप्रसिद्ध धनुष्कोटि से भिन्न है. स्थानीय लोगों की मान्यता है कि यहां पर सीताजी ने कावेरी में स्नान किया था. इसलिए इसका एक नाम 'सीतेय बच्चलु' अर्थात् सीता का स्नानघर है. एक छोटा-सा मंदिर भी यहां है. नदी के तट पर कोदंडराम का विशाल मंदिर बना हुआ है.



चुंचनकट्टे प्रपात

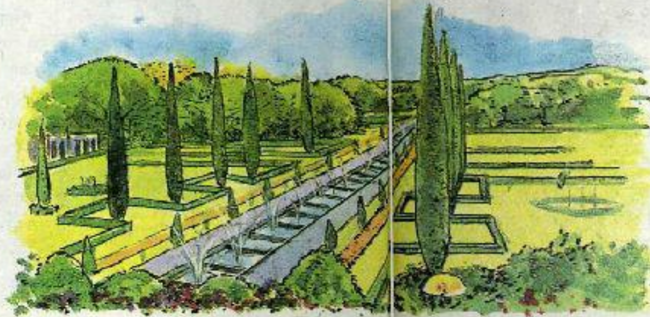


कृष्णराजसागर बांध

अब तो कर्नाटक में आधुनिक बांधों के जरिये कई जगह नदी के प्रवाह को रोक कर सिंचाई के लिए कावेरी का जल प्राप्त किया जाता है. इनमें सबसे उल्लेखनीय है कन्नंबाडी या कृष्णराजसागर का बांध. यह उस जगह बांधा गया है, जहां कावेरी में हेमावती और लक्ष्मणतीर्थ नाम की सहायक नदियां आ कर मिलती हैं.

यह बांध एक महान स्वप्नदर्शी व्यक्ति की सूझ और संकल्प की देन है. वे थे इंजीनियर-राजनेता मोक्षगुंडम् विश्वेश्वरय्या, जिन्हें बाद में अंग्रेजों ने 'सर' की उपाधि दी और स्वतंत्र भारत ने 'भारतरत्न' अलंकरण से सम्मानित किया. पुणे इंजीनियरिंग कालेज में पढ़ाई पूरी करके विश्वेश्वरय्या 25 वर्ष तक बंबई सरकार में इंजीनियर रहे. 1903 में उन्होंने पुणे के पास खडकवासला बांध के लिए स्वयंचलित जलद्वारों (ऑटोमैटिक स्लुइस गेट) की रूपरेखा बनायी थी और उन्हें बैठाया था. बांध में पानी बढ़ जाने पर ये द्वार स्वयं खुल जाते हैं और अतिरिक्त पानी के बह जाने पर स्वयं बंद हो जाते हैं. अपने इस आविष्कार को उन्होंने पेटेंट तो करवाया, पर एक पैसा भी रायल्टी नहीं ली. बांध के पानी के किफायती उपयोग के लिए उन्होंने प्रखंड सिंचाई (ब्लाक इरिगेशन) विधि भी विकसित की. 1909 में वे मैसूर राज्य के चीफ इंजीनियर बने.

सन 1902 में ही कन्नंबाडी से 35 कि.मी. आगे शिवसमुद्रम् प्रपात पर भारत का पहला पनबिजली केंद्र बनाया जा चुका था और उससे कोलार की सोने की खानों को बिजली मुहैया की जाती थी. मगर सूखे मौसम में प्रपात में पानी का बहाव कम हो जाने से खानों को पर्याप्त बिजली लगातार नहीं मिल पाती थी और खान के लिफ्टों के काम में बाधा पड़ती थी.



वृंदावन गार्डन

खान के अंग्रेज प्रबंधक ने एक दिन मुख्य इंजीनियर विश्वेश्वरय्या से मिल कर इसकी शिकायत की. विश्वेश्वरय्या ने इस मौके का लाभ उठा कर सरकार के सामने सुझाव पेश किया कि कावेरी पर एक बड़ा बांध बनाया जाए तो कोलार की खानों को लगातार बिजली देने के साथ-साथ हजारों किसानों के खेतों की सिंचाई के लिए पानी की व्यवस्था की जा सकेगी.



कोलार की सोने की खानों में खुदाई

योजना की लागत 2.5 करोड़ रुपये थी. उतना पैसा पूरे राज्य में पिछली आधी सदी में सिंचाई पर खर्च हुआ था. मैसूर के प्रगतिशील महाराज कृष्णराज वोडेयर चतुर्थ पहले तो चौंके, मगर उन्होंने योजना को स्वीकृति दे दी.

1911 में कन्नंबाडी की नींव रखी गयी. 2,621 मी. लंबा और 43 मी. ऊंचा बांध बांधा जाना था. उससे बननेवाले जलाशय में 140 करोड़ घन मीटर पानी खड़ा होता. 1915 तक 24 मी. ऊंचा बांध बंध गया और कोलार की खानों को पर्याप्त बिजली लगातार मिलने लगी. बांध ने पूरी ऊंचाई 1924 में प्राप्त की.

कन्नंबाडी बांध सीमेंट से नहीं बल्कि सुर्खी से बनाया गया है. ईंटों के चूरे और अनबुझे चूने से सुर्खी बांध के पास ही तैयार की जाती थी. सुर्खी को जमने में वक्त तो ज्यादा लगता है, मगर मजबूती में वह सीमेंट से घट कर नहीं होती. सीमेंट से वह सस्ती भी पड़ती है. सुर्खी की बदौलत कन्नंबाडी बांध की मजबूती आवश्यकता से 10 गुना ज्यादा है.

बांध और जलाशय को महाराज के नाम पर *कृष्णराजसागर* नाम दिया गया. बांध से 18 मी. की निचाई पर *वृंदावन गार्डन* है.

सरो के वृक्षों और विविध आकारों में पानी उछालनेवाले छोटे-बड़े फीआरों से सज्जित यह बगीचा 1927 से 1936 के बीच बना और तभी से देश के मुख्य पर्यटन-स्थलों में गिना जाता है. अब तो प्रायः सभी बड़े बांधों के साथ ऐसे बगीचे बनाये जाते हैं.

बाद में बांध में से 18 मी. की ऊंचाई पर एक नहर निकाली गयी, जिसे 'विश्वेश्वरय्या नाले' कहा जाता है. ('नाले' कन्नड में नहर को कहते हैं.) इस नहर से 36,000 हेक्टेयर जमीन में सिंचाई की अतिरिक्त सुविधा हो गयी. बीसियों छोटे-बड़े इंजीनियरों और 10,000 मजदूरों ने यह काम किया. एक बार तो यह खतरा पैदा हो गया कि बाढ़ का पानी नहर की नयी चिनाई को बहा ले जायेगा. तब मशालों और लालटेनों की रोशनी में इंजीनियरों और मजदूरों ने रात-भर मेहनत करके बाढ़ के पानी के लिए नया बहाव-मार्ग बना दिया.

पर विश्वेश्वरय्या प्रथम व्यक्ति नहीं थे जिन्हें कन्नंबाडी में नदी पर बांध बनाने की बात सूझी. बांध की नींव डालने के लिए जब जमीन साफ की जा रही थी तो एक शिलालेख वहां मिला. १७९४ ई. में लिखे गये उस फारसी शिलालेख में कहा गया था:

"परम कृपालु अल्लाह के नाम पर....हजरत टीपू सुलतान ने... राजधानी के पश्चिम में... नदी के आर-पार बांध बांधने के लिए.... नींव रखी... इसकी शुरूआत तो मैंने की है, मगर इसका पूरा होना अल्लाह की मर्ज़ी पर है."

डा. एम. विश्वेश्वरय्या (1860-1962) मैसूर में आधुनिक युग के प्रवर्तक कहे जा सकते हैं. सन 1912 से 1918 तक वे मैसूर के दीवान (प्रधानमंत्री) रहे. कृष्णराजसागर बांध का निर्माण आरंभ करवाने के अलावा उन्होंने मैसूर विश्वविद्यालय, भद्रावती लोहा और इस्पात कारखाना, सरकारी साबुन कारखाना, मैसूर राज्य बैंक, राज्य बीमा विभाग आदि की स्थापना की. उनके शासन में मैसूर में स्कूलों की संख्या दुगुनी हो गयी. वे भारत में "योजनाबद्ध विकास के पिता" कहलाते हैं. वे मानते थे कि देश का भविष्य उद्योगीकरण पर निर्भर है. योजनाबद्ध विकास के बारे में उन्होंने उस जमाने में पुस्तकें लिखी थीं, जब पंचवर्षीय योजनाओं का नाम भी लोगों ने नहीं सुना था.



डा. एम. विश्वेश्वरय्या

विश्वेश्वरय्या ने बड़ी लंबी उम्र पायी. वे बड़ा नियमबद्ध जीवन जीते थे और लगभग अंत तक सक्रिय बने रहे. 86 वर्ष की उम्र में भी वे 75 फुट ऊंचा जीना बिना सहारा लिये चढ़ जाते थे. लगभग 90 वर्ष की उम्र में उन्होंने आस्ट्रेलिया जानेवाले भारतीय औद्योगिक प्रतिनिधि-मंडल का नेतृत्व किया था.

कृष्णराज वोडेयर चतुर्थ



बदले दंपति

रमानाथ व रमा नामक दंपति एक गाँव में रहते थे। छोटी-सी बात को लेकर भी वे आपस में झगड़ते थे। उनकी रायें अलग-अलग होती थीं। जब देखो, एक दूसरे की नुक़्ताचीनी करते रहते थे। उनके तू तू मैं मैं के कारण जानेंगे तो कोई भी दांतो तले उंगली दबायेगा। अड़ोस-पड़ोस के लोगों ने उन्हें बहुत समझाया कि यों मत झगड़ो। पर कोई फ़ायदा नहीं हुआ। उनकी बात मानने वे तैयार नहीं होते थे।

बड़े अर्से के बाद उनका एक बेटा हुआ। राम उसका नाम था। वे दोनों उसे बहुत चाहते थे। उसपर जान देते थे। इस कारण से ही सही, उनके आपस के झगड़े ख़तम नहीं हुए। राम जैसे-जैसे बडा होता गया वैसे-वैसे माँ-बाप के झगड़े उसे बिल्कुल सही लगने नहीं लगे। उन्हें लेकर गाँव के लोग तरह-तरह की बातें करते रहते थे, उनका हँसी-मज़ाक उड़ाते थे, उनपर ताने कसते थे, जो राम से सहा नहीं गया। उसकी समझ में नहीं आया कि उनमें कैसे परिवर्तन ले आऊँ।

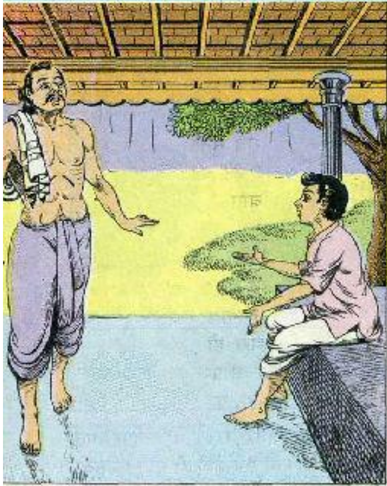
बारह साल की उम्र में इस विषय को लेकर वह बहुत ही चिंतित होने लगा। पशुओं को चराने ले गया और वहाँ भी बैठकर इसी विषय को लेकर दुखी होने लगा। सोचने लगा कि उनका स्वभाव कैसे बदला जाए।

उस समय उसके ही गाँव का भूत वैद्य वहाँ आया और उससे पूछा "बेटे, क्या बात है? बहुत ही परेशान लग रहे हो।"

राम ने अपने माँ-बाप के झगड़ों के बारे पूरा-पूरा बताया और कहा "जब तक वे झगड़ते रहेंगे तब तक मेरी यह परेशानी दूर नही होगी।"

"बेटे, चिंतित न होना। तुम्हारे माँ-

पचीस वर्ष पूर्व 'चन्दामामा' में प्रकाशित कहानी



बाप में केवल तुम्हीं परिवर्तन ला सकते हो। मैं एक उपाय बताऊँगा, सुनो। मैं जैसा कहूँगा वैसा करो'' कहकर वैद्य ने उसके कान में कोई रहस्य बताया और चला गया।

शाम को जब वह घर लौटा, राम ने अपनी माँ से कहा ''माँ, मैंने तुमसे बताया था कि मेरा कुर्ता धोना और सुखाना। बताया था न ? तुम तो एकदम भूल जाती हो। लगता है कि तुम्हें यह भी याद नहीं रहती कि तुम्हारा अपना एक बेटा भी है।'' आग-बबूला होता हुआ वह चिल्लाने लगा।

उसका बरताव देखकर रमा भौंचक्की रह गयी। उसकी समझ में नहीं आया कि जो बेटा कभी भी उससे कठोरता से पेश ही नहीं आता, वह आज क्यों इतनी सख्ती के साथ पेश आ रहा है। क्यों उसकी बातों में इतना कड़वापन है? ज़ोर-ज़ोर से क्यों चिल्ला रहा है? उसने जो दोष उसपर मढ़ा, वह झूठा था। उसने सबेरे बताया ही नहीं कि कुर्ता धोना और सुखाना। रमा को लगा कि इसका कारण कुछ और हो सकता है। उसमें यह परिवर्तन कुछ अजीब-सा ही लगा उसे। इसी के बारे में सोचती हुई वह दुकान में सामान खरीदने चली गयी। थोड़ी देर बाद रंगनाथ खेत से लौटा। गुमसुम बैठे अपने बेटे को देखकर उसने कहा ''क्या है? क्यों ऐसे बैठ गये? क्या तबीयत ठीक नहीं?''

''ठीक क्यों नहीं। लोगों के बीच उठना-बैठना मेरे लिए समस्या बन गयी, कठिन हो गया'' राम ने कहा।

''ऐसी क्या बात हो गयी। कहो तो सही, तुम्हारी वह समस्या क्या है?'' रंगनाथ ने पूछा।

''अच्छे कपड़े नहीं है। धूप हो या बारिश, बिना चप्पलों के पैदल चलना पड़ता है। इकलौता बेटा हूं, फिर भी आप लोग मेरी तरफ ध्यान ही नहीं दे रहे हैं, मेरी परवाह ही नहीं कर रहे हैं'' राम ने बड़ी ही रुखाई के साथ कहा।

उसकी बातें सुनकर रंगनाथ स्तंभित रह गया। राम ने आज तक कभी भी कोई मांग पेश नहीं की। पिता से उसने कभी भी ऐसी कठोरता से बात भी नहीं की।

इतने में रमा सामान खरीदकर लौट आयी। उसने बाप-बेटे का वार्तालाप सुन लिया था। उसने जाना कि पिता के साथ भी उसका व्यवहार रूखा-सूखा है। उस दिन रात को भी भोजन करते समय माँ-बाप को बहुत

तंग किया। अनाप-शनाप बकने लगा। वह भूत वैद्य की सलाह अमल में ला रहा था। हफ़्ता गुज़र गया पर राम की व्यवहार-शैली जैसी की तैसी बनी रही।

रमा ने अपने पति से कहा ''लगता है, इसपर कोई हवा हावी है। मंत्र-तंत्र करवायेंगे।''

''मंत्र-तंत्र से क्या फ़ायदा होगा। इसे कोई दवा दिलवायेंगे'' रंगनाथ ने कहा।

''इस बीमारी की क्या दवा हो सकती है। भूतवैद्य मंत्र फूंकेगा और क्षण भर में भूत उतार देगा'' रमा ने कहा।

''वैद्य ही इस बीमारी की चिकित्सा ढूंढ निकालेगा ''रंगनाथ ने कहा। दोनों आपस में झगड़ते रहे। उन्हें खूब झगड़ा करने देने के बाद राम ने कहा ''फलाने भूतवैद्य के पास आना हो तो आऊंगा।''

राम ने यह नहीं कहा कि वह फलाना भूतवैद्य कौन है। इस बात पर वे खुश हुए और उसे भूतवैद्य के पास ले गये।

उनका कहा सब सुनने के बाद भूतवैद्य ने कहा ''तुम्हारे बैटे को ठीक करना मेरे लिए कोई बड़ी बात नहीं। पर तुम दोनों से अलग-अलग एक प्रश्न पूछूँगा। उस प्रश्न का उत्तर मिलने के बाद तुम्हारे बेटे पर सवार भूत को उतारूँगा।''

उसने पहले रंगनाथ को बुलाया और पूछा ''राम तुम्हारा ही बेटा है न?''

रंगनाथ उसके इस प्रश्न पर चकित हुआ और उसने कहा ''हाँ, वह मेरा ही बेटा है।''

भूतवैद्य ने रंगनाथ को भेज दिया और रमा को बुलाकर वही सवाल किया। उसने भी कहा ''हाँ, वह मेरा ही बेटा है।''

फिर उसने दोनों को बुलाया और कहा ''तुम दोनों ने सही जवाब नहीं दिया। एक हफ़्ते के अंदर सही जवाब सोचना



और आना ।''

हफ्ता हो गया। दंपति दोनों भूतवैद्य के पास आये। उसने उनसे अलग-अलग यही प्रश्न दुहराया।

रंगनाथ को लगा कि इस बार अक्लमंदी से पेश आना है तो उसने कहा ''वह मेरी पत्नी का बेटा है।''

रमा ने तो कहा कि वह मेरा ही बेटा है।

इस बार भी भूतवैद्य ने मुस्कुराकर कहा ''तुम दोनों ने इस बार भी सही जवाब नहीं दिया। खूब सोचो और एक हफ्ते के बाद मेरे पास आओ।''

राम का पागलपन दिन ब दिन बढ़ता जा रहा था। इस बार पति-पत्नी ने आपस में पहले ही बातें कर लीं और निर्णय लिया कि भूतवैद्य से क्या कहें।

सप्ताह ख़तम होते ही वे भूतवैद्य के पास गये। उन दोनों ने कहा ''हमने आपस में बातें कर लीं। राम हम दोनों का बेटा है।'' कहकर अलग-अलग उन दोनों ने वैद्य से कहा।

भूतवैद्य ने हृदयपूर्वक हँसकर कहा ''इस बार तुम दोनों ने सही उत्तर दिया। इतने लंबे अर्से के बाद तुम दोनों पर सवार भूत उत्तर गया। अच्छा हुआ, तुम दोनों ने आपस में बातें कर लीं और निर्णय किया कि क्या कहा जाना चाहिये। पति-पत्नी जब तक एक-दूसरे की सलाह नहीं लेते, एक-दूसरे के मन की बात कह नहीं लेते, तब तक ज़िन्दगी भर एक दूसरे से अलग ही रहेंगे, सदा झगड़ते ही रहेंगे, दोनों के बीच का फासला बढ़ता ही जायेगा। राम को कुछ नहीं हुआ। वह बिल्कुल ठीक है। मेरी सलाह पर ही उसने यह नाटक खेला। दोनों एक-दूसरे के बारे में सोचते हुए सुखपूर्वक जीवन बिताते रहना। राम हीरा है हीरा। अपने झगड़ों से उसे तुम दोनों ने अशांत कर दिया।''

रंगनाथ और रमा को असली बात समझ में आयी। भूतवैद्य ने उन्हें अच्छा पाठ सिखाया। अब वे एक-दूसरे से किसी काम को करने के पहले बातें कर लेते थे और मिलजुलकर निर्णय लेते थे। आपस में झगड़ों का सवाल ही उठता नहीं था। राम भी अब सुख-भरा जीवन बिताने लगा।



वे अंग्रेजों से लड़े-भिड़े – 7

वेलु तम्पी

वर्णन : मीरा उगरा ◆ चित्र : टी. जी. शेट्टी











मैकॉले झांसे में आ गया. उधर कुंजि पिल्ले के अधीन तम्पी की सेनाएं ढकी हुई किश्तियों में अलेप्पी की ओर बढ़ रही थीं.



28 दिसंबर 1808 की आधी रात को तम्पी की सेनाओं ने कोचि की रेसिडेन्सी पर धावा बोल दिया. मैकॉले हैरान !



सैनिकों ने रेसिडेन्सी में तोड़फोड़ की और तमाम कागजात जला डाले. मगर मैकॉले भागने में सफल हो गया.



अगले दिन अलेप्पी और कोइलान में अंग्रेजी फौजों के शिविरों पर भी हमला हुआ.



तम्पी कोइलान से चंद कि.मी. दूर कुंडरा पहुंचे. वहां से उन्होंने घोषणापत्र जारी किया –





तम्पी के शब्दों से प्रेरणा पा कर जनता अंग्रेजों के विरुद्ध उठ खड़ी हुई.



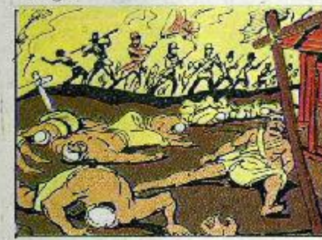
अब तक विद्रोह की खबर मद्रास में कंपनी के मुख्यालय में पहुंच चुकी थी. चारों ओर से चटपट कुमुक कोइलान रवाना की गयी....



...और 18 जनवरी 1808 को कोइलान में छह घंटे की मुठभेड़ में तम्पी की सेना पराजित हो गयी.



चंद हफ्ते बाद अरन्चोलि में तम्पी की फिर हार हुई.















समाप्त



महाभारत

संजय ने अपना दौत्य-धर्म पूर्ण किया और हस्तिनापुर लौटकर धृतराष्ट्र से मिला। कहा "राजन्, धर्मराज ने आप ही को दोषी ठहराया। आप ही पर अधर्म का दोष मढ़ा। धर्मराज का भेजा संदेश कल की सभा में सबों की उपस्थिति में सुनाऊँगा"। धृतराष्ट्र की अनुमति लेकर वह घर चला गया।

संजय के चले जाते ही धृतराष्ट्र ने विदुर को बुलाकर उससे परामर्श लेना चाहा कि अब क्या किया जाए। विदुर के आते ही उसने कहा "संजय पांडवों से मिलकर आया। मुझे नींद नहीं आती। मैं बहुत ही व्याकुल हूँ। मन मेरा बिलख रहा है। कई ऐसी बातें बताओ, जिससे मेरा मन शीतल हो जाए।"

विदुर को मालूम था कि धृतराष्ट्र की इस बेचैनी के कारक पांडव ही हैं। उसने उसे खूब डाँटा-फटकारा और कहा "महाराज, भूमि के लिए झूठ मत बोलना। कहीं वंश का नाश न हो जाए, इसका ख्याल रखना। दुर्योधन के लिए तुमने पांडवों को दूर कर लिया। तुम्हीं देखोगे कि दुर्योधन की अधोगति होगी, वह भ्रष्ट हो जायेगा। अब ही सही, पांडवों को बुलाओ और उन्हें जीवित रहने के लिए कुछ ग्राम दो। स्मरण रखना, आपदाओं में वे ही तुम्हारे बेटों को उबार सकते हैं।"

धृतराष्ट्र ने कहा "मैंने सदा पांडवों के बारे में अच्छा ही सोचा, उनका भला ही करना चाहा। किन्तु दुर्योधन की याद आते ही मेरी बुद्धि परिवर्तित हो जाती है। यह सब दैवयोग है। भला मैं क्या कर सकता हूँ ?"

दूसरे दिन धृतराष्ट्र की सभा लोगों से खचाखच भर गयी। युद्ध में दुर्योधन की सहायता करने आये हुए सब राजा पांडवों



का संदेश सुनने के लिए अति आतुर थे।

सभा में प्रवेश करने के बाद संजय ने सबको प्रणाम किया और गंभीर स्वर से कहा "सज्जनो, मैं पांडवों के यहाँ हो आया। उन्होंने आप सबका कुशल-मंगल पूछा। वे वहाँ सकुशल हैं। मैंने उन्हें धृतराष्ट्र की कहीं सारी बातें बतायीं।

धृतराष्ट्र ने कहा "संजय, तुमने पांडवों को मेरा संदेश सुनाया, इसके लिए तुम्हें मेरे धन्यवाद। शेष पांडवों ने क्या कहा, वह बाद सुनेंगे। पहले यह बताना कि अर्जुन ने क्या कहा। यहाँ उपस्थित राजा भी सुनेंगे"। तब संजय ने यों बताया।

अर्जुन ने यों बताने के लिए कहा "दुर्योधन आदि ने अनगिनत पाप किये, किन्तु उन्होंने अपने पापों का प्रायश्चित्त नहीं किया। उस अनुभव से वे नहीं गुज़रे। युद्ध छिड़ जाए तो उन्हें पाप-दंड का अनुभव होगा। धर्मराज ने आज तक अपना क्रोध प्रकट होने नहीं दिया। उसे दबाये रखा। वह कार्य रूप धारण करे तो कौरव मिट जाएँगे, भस्म हो जाएँगे, भीम जब गदा लेकर कौरव सेना के नाश के लिए टूट पड़ेगा तब अवश्य ही दुर्योधन को अपने कुकर्मों पर पश्चात्ताप होगा। नकुल, सहदेव, विराट, द्रुपद, उपपांडव, अभिमन्यु और मैं जब युद्ध-क्षेत्र में कौरवों पर पिल पड़ेंगे तब दुर्योधन के पास पश्चात्ताप के सिवा कुछ और नहीं बचेगा। मैं बड़ों को नमस्कार करूँगा और अपने राज्य के लिए जी-जान से लड़ूँगा। जब तक पांडव जीवित हैं, धृतराष्ट्र के पुत्र कौरव हमारे राज्य पर कैसे शासन करेंगे, कैसे सुखपूर्वक जीवित रह सकेंगे। उन्होंने युद्ध में विजय प्राप्त की तो इसका यह अर्थ हुआ कि धर्म का नाश हो गया। मेरा पूरा विश्वास है कि ऐसा कभी होगा ही नहीं। युद्ध अनिवार्य हुआ तो अवश्य ही धृतराष्ट्र के वंश का निर्मूलन हो जायेगा। कर्ण के साथ-साथ धृतराष्ट्र के सब पुत्रों को मैं ही अकेले मार डालूँगा। अतः आप क्या करेंगे, सोच लीजिये, निर्णय कर लीजिये"।

तब भीष्म ने दुर्योधन से कहा "कर्ण, शकुनि व दुःश्शासन की बातों में आकर तुम्हारा मन कलुषित हो गया। अपना धर्म भूल गये। कौरव-पांडव युद्ध रोक दो। नहीं तो अनर्थ हो जायेगा, सर्वनाश होगा।"

भीष्म की बातों पर कर्ण क्रोधित हो उठा और ज़ोर देकर कहने लगा "भीष्म, मेरे बारे में आपने जो कहा, कोई और कहता तो उसे वहीं मार डालता। उसके जीवित रहने की संभावना ही नहीं होती। मैंने सदा अपना राजधर्म निभाया। उससे मैं कभी च्युत नहीं हुआ। दुर्योधन आदि के विरुद्ध मैंने कभी कोई द्रोह नहीं किया। युद्ध में अकेले मैं सब पांडवों को हरा सकता हूँ। उनसे शांति क्यों और कैसे, जो पहले से ही हमारे शत्रु हैं। जो दुर्योधन व धृतराष्ट्र चाहते हैं, वही मैं करूँगा"।

तब भीष्म ने धृतराष्ट्र से कहा "यह कर्ण बात-बात पर बार-बार कहता रहता है कि मैं पांडवों को मार डालूँगा। पांडवों ने जो-जो महान कार्य किये, उनमें से एक भी कार्य इसने नहीं किया। यह हीन है, दुर्बुद्धि इसमें कूटकूट कर भरी हुई है, इसीलिए यह सदा पांडवों का अपमान करने पर तुल जाता है। गोग्रहण के समय जब अर्जुन ने इसके भ्राता को मारा, तब इसने क्या किया? क्या कर सका? घोष-यात्रा के समय जब दुर्योधन को गंधर्व बंदी बनाकर ले गये तब इसने क्या किया? क्या इससे कुछ हो पाया? पांडवों ने ही उसे छुड़ाया। यह कर्ण बोलता बहुत है और करता कुछ नहीं। इसकी बातों पर ध्यान मत दो"।

द्रोण ने कहा "भीष्म की सलाह मुझे सही लगी। अर्जुन ने संजय के द्वारा जो संदेश भेजा, उसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं, उसमें सच्चाई है। मैं सदा कहता रहा कि पांडवों से संधि करने मे ही हमारी भलाई है"।



भीष्म-द्रोण की कही बातें सुनकर धृतराष्ट्र चुप रहा। न ही उनका विरोध किया न ही उनका समर्थन। संजय से केवल इतना ही पूछा कि धर्मराज का क्या कहना है। युद्ध में धर्मराज की सहायता कौन-कौन कर रहे हैं। संजय ने तत्संबंधी पूरा विवरण दिया और कहा कि धर्मराज युद्ध के लिए सन्नद्ध है।

धृतराष्ट्र भीम की याद आते ही भय से कांप उठता है। उसका मानना है कि संजय के बताये सारे के सारे योद्धा एक तरफ़ तो अकेले भीम ही दूसरी तरफ़। भीम कितना बलशाली है, यह रहस्य भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य तथा उसे ही ज्ञात है। भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य अवश्य ही कौरवों के पक्ष में ही लड़ेंगे, किन्तु उनके हृदय में पांडवों



के प्रति शत्रुता की भावना नहीं है। धृतराष्ट्र जब इन सारे तथ्यों के बारे में सोचने लगा तो लगा कि कौरवों का विनाश होकर ही रहेगा। उसे अपनी आँखों के सामने कौरवों के नाश के दृश्य लगातार दिखायी देने लगे। अर्जुन कभी भी युद्ध में नहीं हारा। उसका सामना करनेवाले कौन हैं? कर्ण का विश्वास किया नहीं जा सकता। द्रोण वृद्ध है। वह अर्जुन का गुरु भी है।

''युद्ध हुआ तो कौरव-वंश का नाश होकर ही रहेगा। लगता है, युद्ध न होने पर ही सब सुखी रह सकते हैं। अगर आप सब मान जाएँ तो शांति की स्थापना की दिशा में अग्रसर होंगे।'' धृतराष्ट्र ने कहा।

तब संजन ने धृतराष्ट्र से स्पष्ट कह दिया ''राजन्, इन समस्याओं की जड़ आप हैं। आप ही इन कष्टों के मूलकारक हैं। कुरु अरण्य भूमियों के अलावा शेष जो भी है, वह पांडवों का ही कमाया हुआ है। उन्होंने ही जीतकर आपको समर्पित किया, जिसे आपने अपना बना लिया। अब आपका दावा भी है कि सब कुछ मेरा ही है। आपके अधीन जितने राजा थे, उन्होंने पांडवों की शक्ति को आँका और उनके पक्ष में लड़ने सन्नद्ध हो गये। दुर्योधन को काबू में नहीं रखा तो अनर्थ हो जायेगा''।

तब दुर्योधन ने पिता धृतराष्ट्र से कहा ''आपको हमारे हार जाने का क्यों भय है। हम अवश्य जीतेंगे। आपको और विदुर को छोड़कर बाकी सबको मारने का कृष्ण का उद्देश्य है। पांडव सचमुच ही युद्ध में जीतने का दावा करते हैं, उन्हें अपने शक्ति-सामर्थ्य पर इतना भरोसा है तो क्यों पाँच गाँव ही चाह रहे हैं। उसे पाकर ही क्यों संतृप्त रह जाना चाहते हैं। भीम से आप क्यों भयभीत हो रहे हैं? अपनी गदा की एक ही चोट से उसे मार डाल सकता हूँ। भीष्म अकेले ही पांडव सेना को सर्वनाश करने का सामर्थ्य रखते हैं। द्रोण व अश्वत्थामा अर्जुन का वध नहीं कर सकते? कर्ण के पास इंद्र की दी हुई अद्भुत शक्ति है। पांडव सेना में सच्चे योद्धा तो उंगलियों पर गिने जा सकते हैं। पांडव, धृष्टद्युम्न, सात्यकी मात्र ही उनके पक्ष के योद्धा हैं। ऐसे योद्धा तो हमारे पक्ष में कितने ही हैं''।

फिर उसके बाद उसने संजय से पूछा कि पांडवों का युद्ध-व्यूह क्या है? संजय ने पूरे विवरण दिये।

उन विवरणों को सुनकर धृतराष्ट्र एकदम घबरा उठा। उसने तुरंत दुर्योधन से कहा ''पुत्र, युद्ध की सोच त्यज। तुम ऐसा करोगे तो सभी तेरी प्रशंसा करेंगे। सुखी जीवन बिताने के लिए आधा राज्य पर्याप्त है। पांडवों को उनका हिस्सा दे दो। अज्ञान-वश हो अपने पैरों पर खुद कुल्हाड़ी मत मार।''

''मुझे किसी की बातों को सुनने या मानने की कोई आवश्यकता नहीं। पांडवों को जीतने के लिए मुझे किसी की सहायता की जरूरत नहीं। कर्ण और दुःशासन साथ हों तो बस मुझे कोई और नहीं चाहिये। हम तीनों ही पांडवों को मारने की शक्ति रखते हैं। हममें से कोई एक ही जीवित रहेगा। कौरव अथवा पांडव। मैं सुई भर की भूमि भी उन्हें नहीं दूँगा।'' दुर्योधन ने कहा।

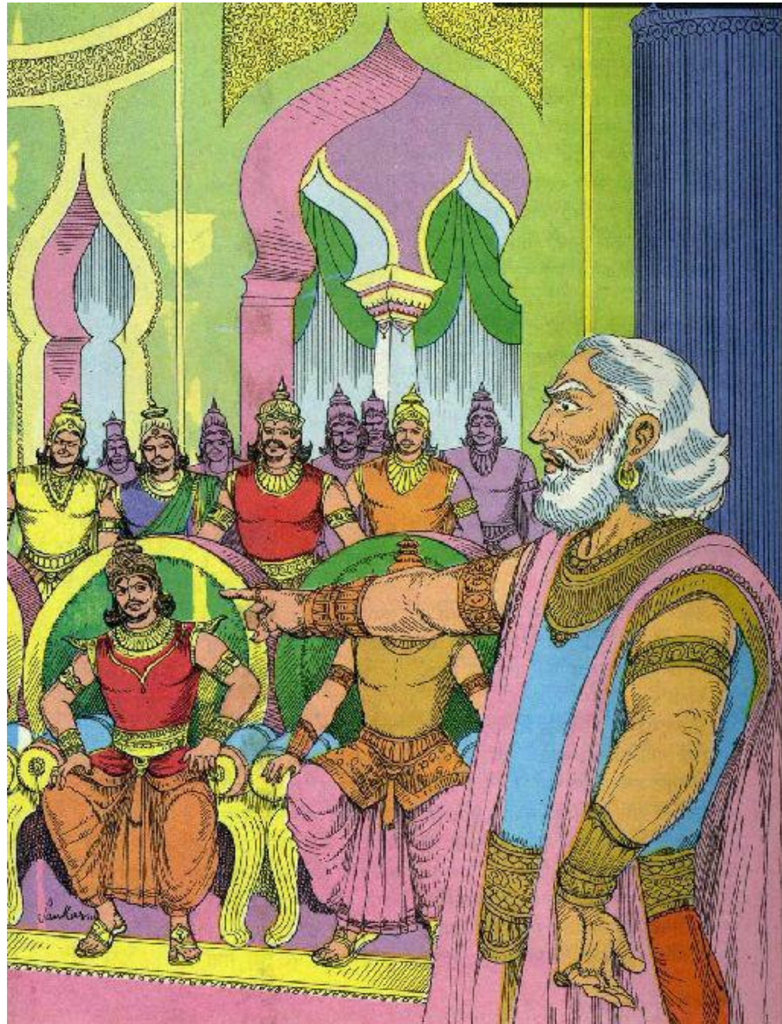
कर्ण ने दुर्योधन का समर्थन किया। उसने कहा कि युद्ध का पूरा भार मैं ही संभालूँगा और पांडवों का सर्वनाश करके ही रहूँगा।

भीष्म को उसकी शुष्क बातों पर उससे घृणा हो गयी। उसने कहा ''कर्ण, तुम्हारी बुद्धि विकट रूप धारण कर रही है। अर्जुन का पराक्रम और कृष्ण की कुशाग्र बुद्धि को जानते हुए भी क्यों व्यर्थ बातें करते जा रहे हो। क्या यह नीच के लक्षण नहीं?'' भीष्म की इस बात से कर्ण क्रोध से तिलमिला उठा। उससे वह अपमान सहा नहीं गया। उसने भीष्म से कहा ''मानता हूँ, कृष्ण



महान है, किन्तु मुझपर कीचड़ उछालना आपको शोभा नहीं देती। मैं अस्त्र-सन्यास ले रहा हूँ। जब तक आप युद्ध क्षेत्र में होंगे, तब तक मैं वहाँ कदम ही नहीं रखूँगा।'' कहकर वह सभा से चला गया।

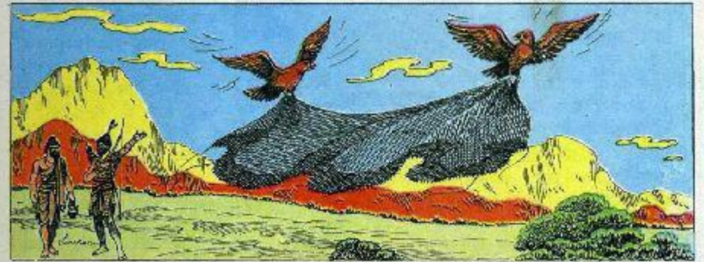
भीष्म ने व्यंग्यपूर्ण हँसी हँसकर कहा ''दुर्योधन, अकेले ही शत्रुसंहार कर सकने वाले योद्धा ने तो शस्त्र-सन्यास ले लिया। युद्ध-भार अब कौन संभालेगा? कौन विश्वास करेगा कि यही शत्रुओं पर विजय पाने की क्षमता रखता है। जयद्रथ, बाह्लिक जैसे महायोद्धाओं की उपस्थिति में क्या ऐसी बड़ी-बड़ी बातें करना उचित है? अपने को ब्राह्मण कहकर इसने परशुराम से आयुध प्राप्त करने का प्रयत्न किया। अधर्म करने पर तुल गया।''



भीष्म के मुँह से कर्ण की निंदा सुनते हुए दुर्योधन से रहा नहीं गया। उसने कहा "दादाजी, पांडव भी इन विषयों में हमसे कुछ कम नहीं हैं, हमारे ही साथ वे भी तो जन्मे। हम भी शस्त्र-विद्याएँ बखूबी जानते हैं। ऐसी स्थिति में आपने यह कहने का साहस कैसे किया कि पांडव ही जीतेंगे। मैं युद्ध में किसी पर निर्भर रहना नहीं चाहता"।

दुर्योधन की युद्ध-आकांक्षा को देखकर विदुर ने उसे एक कहानी सुनायी। एक किरात ने जाल फेंका तो उसमें दो पक्षी फंस गये। पर वे डरे नहीं। दोनों ने मिलकर अपना पूरा बल लगाया और जाल-सहित आकाश में उड़े। उनका पीछा करते हुए किरात जमीन पर दौड़ने लगा। यह देखकर एक मुनि ने उससे कहा "मूर्ख, पक्षी उड़ रहे हैं आकाश में। तुम दौड़ रहे हो भूमि पर। क्या इससे कोई प्रयोजन होगा?" तब किरात ने कहा "मुनिवर, जब तक वे दोनों पक्षी आपस में आकाश में नहीं झगड़ते तब तक मानता हूँ, मेरे प्रयत्न व्यर्थ ही साबित होंगे। परंतु जैसे ही उनमें झगड़ा होगा, पक्षी भी मेरे होंगे और मेरा जाल भी मुझे मिल जायेगा।" आखिर हुआ भी यही। किरात को दोनों पक्षी भी मिले और जाल भी।

विदुर ने दुर्योधन को यह कहानी सुनाने के बाद कहा "पुत्र, सगे-संबंधी जब संपत्ति के लिए आपस में झगड़ने लगते हैं, तब उससे अहित ही होता है। एक और घटना सुनो। हम एक बार किरातों के साथ गंधमाधन पर्वत गये। वहाँ की एक भयंकर खाई में एक बड़ा मधुमक्खियों का छत्ता था। वहाँ के लोगों ने हमें बताया कि उस शहद को पीने से आदमी अमर हो जाता है। उन्होंने यह भी कहा कि उस शहद को पीने से अंधे का अंधापन दूर हो जाता है। हमारे साथ आये किरातों ने उस शहद को किसी भी स्थिति में पीना चाहा। खाई में उतरे, पर वहाँ के भयंकर सर्पों ने डसा और सबके सब वहीं मर गये। वे शहद पीने के लिए उतावले थे पर उन्होंने यह नहीं सोचा कि उसे पाने में कितनी बाधाएँ हैं और उसमें क्या-क्या विपत्तियाँ हैं। राज्य के लिए कल तुम जो युद्ध करने जा रहे हो, वह भी इसी प्रकार का अविवेक होगा।"



'चन्दामामा' की ख़बरें

सौ सालों की पूर्ति के बाद फलीभूत इच्छा

अनोमोलिना प्यूर्टोरिको देश की है। अपने सोलहवें वर्ष में अपनी पढ़ायी पूरी नहीं कर सकी। उसके माता पिता को उसकी सहायता की अत्यंत आवश्यकता थी, इसलिए वह सिनेमा टिकट बेचने के काम में जुट गयी। और पढ़ने की उसकी इच्छा पूरी नहीं हो पायी। आख़िर अस्सी सालों के बाद उसने अपनी पढ़ाई पूरी की और प्रमाण-पत्र पाया। अब उसकी उम्र है एक सौ दो साल।

हमारे ही देश में अधिक साक्षर

यद्यपि केरल और पश्चिम बंगाल में साक्षर अधिक संख्या में हैं, परंतु देश भर में साक्षरों की संख्या पचास प्रतिशत से कम है। किन्तु अन्य देशों से तुलना की जाए तो हमारे ही देश में अधिक लोग साक्षर हैं। इनकी संख्या है, ५९०,१००,२०० । यह संख्या अमेरीका, यूरोप, रूस के साक्षरों की संख्या से अधिक है। हाल ही में दिल्ली में संपन्न एक सभा में जवाहरलाल विश्वविद्यालय के प्रोफेसर डा. विक्टर ने तत्संबंधी विवरण दिये। हमारे देश को जब स्वतंत्रता प्राप्त हुई तब ९७ प्रतिशत स्त्रीयाँ पढ़ी-लिखी नहीं थीं। किन्तु आज अमेरीका व रूस की स्त्रीयों से अधिक साक्षर स्त्रीयाँ हमारे देश में हैं। १९४७ से हर साल तीन विश्वविद्यालयों के हिसाब से नये-नये विश्वविद्यालयों की स्थापना देश भर में हो रही है। एक-एक विश्वविद्यालय में लगभग दस लाख विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। औसतन् हर दिन बीस डाक्टरेट प्रदान किये जा रहे हैं।

अद्भुत स्मरण-शक्ति



पांच साल का वरुण अद्भुत स्मरण-शक्ति प्रदर्शित कर रहा है। अगर उससे पूछा जाए कि हमारे देश में कितने राज्य हैं, केंद्र सरकार के प्रशासित कितने प्रांत हैं, एक-एक का वैशाल्य क्या है, वहाँ की आबादी कितनी है, तो वह चुटकी बजाने भर की देरी में बता देता है। आप उससे यह भी पूछें कि एक-एक राज्य में कितने जिले हैं, तो वह पल भर में बता देता है। इतना ही नहीं, वह संसार भर की (१६५) देशों की करेंन्सी भी आसानी से बता देगा। वह संसार भर के झंडों व राजधानियों के नाम भी सुनायास बता देगा। घटी ऐतिहासिक मुख्य घटनाओं तथा उनकी विशिष्टताओं के बारे में भी बताने की वह क्षमता रखता है। संसार के सुप्रसिद्ध विश्वविद्यालयों तथा अंतर्राष्ट्रीय प्रसिद्ध संस्थाओं के चिह्नों का भी विवरण देने की शक्ति रखता है। यह बालक वरुण पहले दर्जी में है। यह केरल राज्य के विजयन नामक एक अध्यापक का पुत्र है। माँ का नाम है अजिता। दूसरे साल से ही इसकी स्मरण शक्ति असमान थी। अपने पुत्र की इस विशिष्टता को माता-पिता ने जाना और उसे आवश्यक प्रशिक्षण दिया। दस साल के इस बालक को क्विज पुस्तकें पढ़ने में बहुत ही अभिरुचि है।



कजिरंगा नेशनल पार्क



एक ही सींगवाले खड्गमृगों के लिए कजिरंगा नेशनल पार्क सुप्रसिद्ध है। ईशान्य प्रांत के असम राज्य के ब्रह्मपुत्र की खाइयों में कर्बी आंग लांग की पहाड़ियों के पादतलों में लगभग ४३० वर्ग किलो मीटरों के वैशाल्य में विस्तरित है यह पार्क।

एक समय था जब कि पूरे उत्तर भारत देश में खड्गमृग थे। क्रमशः उनका नाश होता गया। १९०८ तक उनकी संख्या बारह तक घट गयी। मिटते हुए इन खड्गमृगों को बचाने के उद्देश्य से १९२६ में इस पार्क की स्थापना हुई। अब २६०० खड्गमृग हैं।

हमारे देश का खड्गमृग ५.५ फुटों तक की ऊँचाई तक बढ़ता है। इसका वजन है १८०० कि. ग्रा.। अफ्रीका का खड्गमृग सबसे बड़ा है। सुमत्रा जाति के खड्गमृग सबसे छोटे होते हैं। इनकी ऊंचाई ४.५ फुट मात्र है। इनका वजन है १००० कि.ग्रा. मात्र। जावा खड्गमृग बहुत ही कम पाये जाते हैं।

कजिरंगा मृगरक्षणालय की भूमि नमी से भरी है। यहां कहीं-कहीं बाड़े व फलवृक्ष हैं। प्राकृतिक सौंदर्य से भरा यह मृगरक्षणालय हमारे देश का बहुत ही बड़ा हैकिंग केंद्र भी है।

पुरूरव

कितने ही यज्ञ करके देवताओं को संतुष्ट किया राजा पुरूरव ने । वे अक्सर देवलोक आया-जाया करते थे । एक दिन उन्हें मार्ग-मध्य स्त्री का आर्तनाद सुनायी पड़ा । केशि नामक राक्षस ऊर्वशी व चित्रलेखा नामक दो अप्सराओं को बलपूर्वक ले जा रहा था । पुरूरव ने उस राक्षस को हराया और उन अप्सराओं को स्वर्गलोक सुरक्षित पहुँचाया ।

कुछ समय गुज़र गया । एक मुनिवर के शाप के कारण ऊर्वशी मानव बन गयी और भूलोक में उसे रहना पड़ा । भूलोक में आने के बाद उसने पुरूरव को देखा । उसके अद्‌भुत सौंदर्य पर पुरूरव मुग्ध हो गया और उससे विवाह रचाने का प्रस्ताव रखा । तब उसने इस प्रस्ताव की स्वीकृति के लिए कुछ शर्तें रखीं । उसने कहा कि मेरे पास जो दो हिरनें हैं, उनकी रक्षा हो । जब तक वे सुरक्षित होंगी, तब तक वह उसके साथ रहेगी । पुरूरव ने उसकी इस शर्त को मान लिया ।

पति-पत्नी बनकर कुछ समय तक उन्होंने सुखपूर्वक जीवन बिताया । ऊर्वशी के शाप-काल के समाप्त होने का समय आसन्न हो गया । उसके स्वर्ग में न होने के कारण इंद्र भी बहुत ही बेचैन था । उसने यह जानने के लिए गंधर्वों को भेजा कि ऊर्वशी रहती कहाँ है? गंधर्वों ने एक तूफानी रात के समय उन हिरनों को चुराया, जो पुरूरव के वश में थे । निद्रालु पुरूरव हठात् उठ बैठा और विषय जानकर उनका पीछा किया । परंतु वह उन्हें पकड़ नहीं पाया । नि.ग्मभंग हो जाने के कारण ऊर्वशी ने उसी क्षण पुरूरव को छोड़ दिया और स्वर्गलोक चली गयी ।

पुरूरव से ऊर्वशी का वियोग सहा नहीं जा सका । वह पागल की तरह घूमने-फिरने लगा । उसकी व्यथा को देखकर देवताओं में उसके प्रति दया उत्पन्न हुई । उन्होंने उसे वर दिया कि वर्ष में एक बार कुरुक्षेत्र में ऊर्वशी, पुरूरव से मिल सकती है । पुरूरव के जीवन में पुनः आनंद का उदय हुआ ।

पंडितों का कथन है कि ऊर्वशी-पुरूरव के वृत्तांत में बहुत ही गूढार्थ निहित है । इस प्रेम गाथा के आधार पर कितने ही कवियों ने काव्य और नाटक भी रचे ।



कोसक्स



हज़ारों सालों के पहले एशिया महाद्वीपों के बड़े-बड़े मैदानों से हरे-भरे प्रांतों से, पहाड़ी क्षेत्रों से विभिन्न जातियों के लोग रूस में आकर बस गये । कोसक्स वर्ग के लोग भी इन्हीं लोगों में से हैं । काले समुद्र के समीप के अजोप समुद्र में दान नदी का संगम होता है । वे इसी नदी के तट पर बस गये । यह बहुत ही दृढ़ व विशिष्ट जाति है । एक विशिष्ट जाति के घोड़ों को पालने में कोसक्स प्रसिद्ध व प्रवीण हैं । घुड़सवारी करने में उनकी बराबरी का कोई है ही नहीं । ये युद्धवीर हैं । विशेषतया, अश्वदलों के योद्धाओं के नाम से ये सारे संसार में प्रसिद्ध हैं । अब भी ये अपना गुट बनाकर गाते रहते हैं और संसार भर में घूम-घूम कर अपना संगीत सुनाकर श्रोताओं को मुग्ध करते हैं । यों कोसक्स जहाँ जाएँ, अपनी छाप छोड़ जाते हैं ।

इन्द्रधनुष

जीववृक्ष



नीम के पत्ते को वृक्षशास्त्र में 'मीलिया अजाड राट्टा' कहते हैं । हमारे देश में खासकर दक्षिण भारत में धर्मसंबंधी अनेकों आचारों में नीम के पत्ते को दीर्घ काल से उपयोग में ले आ रहे हैं । हमारे बड़ों का विश्वास है कि दुष्ट शक्तियों को दूर भगाने में यह बहुत ही शक्तिशाली साधन है । इस विश्वास में सत्य है, यह साबित कर रहा है, आधुनिक विज्ञान परिशोधन । नीम के पत्ते की गंध तथा उसका रस तरह-तरह की बीमारियों को व्याप्त करनेवाले क्रिमि कीटकों का नाश करता है और लोगों को बीमारियों से दूर रखता है । नीम के पेड़ के हर भाग में औषधि के गुण मौजूद हैं । नीम के पेड़ के छाल से बनाये जानेवाले कषाय का उपयोग ज्वर को दूर करने के लिए किया जाता है । कहा जाता है कि नीम के किसलयों को खाने से माँ-बच्चों में बीमारियों को रोकने की शक्ति बढ़ती है । नीम का पेड़ अद्‌भुत औषधियों से भरा पड़ा जीववृक्ष है ।

स्वतंत्रता की स्वर्णजयंती के अवसर पर 'चन्दामामा' की भेंट

प्रथम स्वतंत्रता - संग्राम



(ईस्ट इंडिया के विरुद्ध छिड़ा विद्रोह देश भर में व्याप्त हुआ। यद्यपि प्रारंभ में कुछ सैनिकों ने यह विद्रोह किया, पर उसके बाद स्थानीय शासक, प्रमुख व्यक्ति, सामान्य जनता ने इसमें सक्रिय रूप से भाग लिया। नाना साहेब, झान्सी लक्ष्मीबाई ने प्रधानतः इस विद्रोह का नेतृत्व संभाला। ब्रिटिश सैनिकों ने झान्सी के क़िले को घेर लिया और झान्सी की सेना के साथ लड़ने लगे। साथ ही दूसरी तरफ़ से प्रवेश करके किसी की जानकारी के बिना उस गोदाम को तोपों से उड़ा दिया, जहाँ बारूद रखा हुआ था।) -बाद

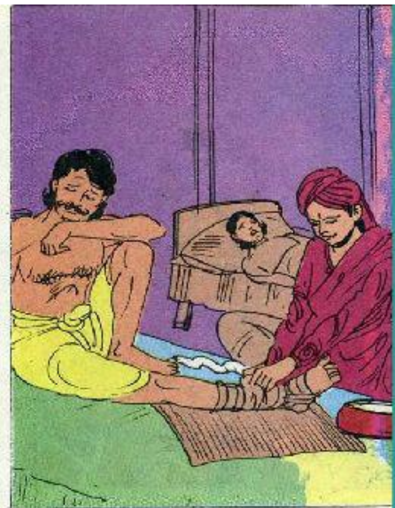
सर हाग रोज के नेतृत्व में ब्रिटिश सैनिक झान्सी क़िले के पूर्वी भाग में गये। वहाँ स्थित बारूद के गोदाम को तहस-नहस कर दिया। फिर भी क़िले के अंदर जो सैनिक, स्त्री-पुरुष मौजूद थे, डटकर ब्रिटिश सैनिकों का सामना किया। क़िले की दीवारों पर चढ़ने के उनके प्रयत्नों को विफल कर दिया। उन्हें नीचे गिराया और मार डाला।

क़िले के अंदर पानी लानेवाले को शत्रु सैनिकों ने मार डाला और ज़मीन में गाड़ दिया। क़िले के अंदर का कुआँ भी सूख गया। राजभवन के एक विशाल कक्ष में गंगाजल से भरे कुछ गागर थे। और कोई चारा न होने के कारण झान्सी लक्ष्मीबाई ने उस कक्ष के द्वार खोले और कहा "इस पवित्र जल से हम अपनी प्यास बुझाएँ। इस युद्ध में हमारी मृत्यु हो जाए तो हमें सद्गति प्राप्त हो।"

क़िले की दीवार पर चढ़ते हुए चार ब्रिटिश सेनाधिकारी नीचे गिराये गये जिससे वे मर गये। इस कारण ब्रिटिश सेनाएँ पीछे हटीं। उन्हें लगा कि दीवारों पर चढ़कर क़िले में घुसना संभव नहीं है।

दूसरे दिन रात को ब्रिटिश शिविरों में वर्तमान स्थिति पर चर्चाएँ होने लगीं। अपने अधीन जो दलनायक थे, उनके अभिप्राय जानने के बाद सर हाग रोज ने उनसे यों कहा।

"हमने कितने ही योग्य सैनिकों को खो दिया। झान्सी लक्ष्मीबाई अकेले ही जब इतने सैनिकों को मौत के घाट उतार सकती है तब विविध प्रांतों में छिड़े इस युद्ध को हम कैसे रोक पायेंगे, इस विद्रोह को कैसे कुचल सकेंगे? मैंने कल्पना भी नहीं की थी कि एक अबला स्त्री डटकर हमारा मुकाबला कर सकेगी। हमारे सैनिकों ने भी मुझे सावधान किया कि झान्सी लक्ष्मीबाई पर विजय पाना कोई आसान काम नहीं। किन्तु मैंने उनकी बातें अनसुनी कर दीं। अब समझ में आया कि वह अबला नहीं, सबला है। झान्सी पर हमारी जय-परायज पर आधारित है, भारत में हमारी कंपनी का भविष्य। कल ही हर स्थिति में हमें क़िले में प्रवेश करना होगा। रानी को हमें सजीव पकड़ना होगा। वही हमारी महत्वपूर्ण विजय होगी। बाक़ी जितने भी हैं, उन्हें निस्संकोच मार डालिये। किन्तु रानी को मारना मत। ज़रूरत पड़ी तो उसे घायल कीजिये, पर किसी भी स्थिति में उसे मारना मत। उससे सच उगलवाना होगा और उससे क्षमा-याचना मंगवानी है। वह हमसे प्राण-भिक्षा माँगे। स्थानीय शासकों के लिए यह गुण-पाठ साबित होगा। जो उसे सजीव पकड़कर ले आयेगा, उसे हम मूल्यवान भेंट देंगे"।



यों ब्रिटिश शिविरों में इस विषय को लेकर गंभीर चर्चा जारी थी। उसी समय कुछ प्रमुख व्यक्ति रानी से मिलने उसके पास गये।

उस समय रानी घायल लोगों की चिकित्सा में मग्न थीं। वहाँ आये प्रमुखों ने उन्हें नमस्कार किया और कहा "माते, अब हमें किसी भी हालत में विलंब करना नहीं चाहिये। कल वे परदेशी अवश्य ही हमारे क़िले में प्रवेश करेंगे। बिना बारूद के उनके दुराक्रमण का सामना करना असाध्य कार्य है। आपने वह अद्वितीय साहस-पूर्ण कार्य



किया, जो देश का कोई राजा या रानी नहीं कर सका । आप शत्रुओं के चंगुल में फँस जाएँ, इससे बढ़कर दुखदायी बात और क्या हो सकती है ।''

''तो क्या आप नहीं चाहते कि मैं अपनी मातृभूमि के लिए मर-मिट जाऊँ, कीर्ति पाऊं'' बड़े ही प्यार से रानी ने मुस्कुराते हुए पूछा ।

''माँ, हमें क्षमा कीजिये । इस देश में भविष्य में कितने ही वीर पुरुष व वीर वनिताएँ जन्म ले सकती हैं, किन्तु हमारा पक्का विश्वास है कि आपकी बराबरी की कोई भी वीर नारी इस भूमि पर जन्म नहीं लेगी । हमें यह भी मालूम है कि आप मौत से बिल्कुल डरती नहीं । किन्तु हमें संदेह है कि क्रूर, दुष्ट ब्रिटिश सैनिक आपको बंदी बनाएँगे और आपका घोर अपमान करेंगे । यह सोचने मात्र से हमारा शरीर कांप उठता है । हमें दुख-सागर में डुबो देता है''।

रानी ने आँखें बंद कर लीं और कुछ क्षणों तक सोचती रहीं । फिर आँख खोलकर कहा ''हाँ, आपके कथन में सच्चाई है । आपकी सलाह का पालन करना ही समुचित होगा । मुझे यहाँ से बचकर जाना है. । अपनी प्राण-रक्षा के लिए नहीं बल्कि इस युद्ध को जारी रखने के लिए, अन्य प्रांतों से और सैनिकों के समीकरण के लिए, अपने ध्येय की पूर्ति के लिए । किसी भी स्थिति में अंग्रेज़ों को यहाँ से भगाना है । अपने राज्य को और अपने देश को उनके चंगुल से मुक्त करना है । हमें उनके दास नहीं बनना है । अपनी स्वतंत्रता के लिए हम मर-मिट भी जाएँ, तो कोई बात नहीं । हम पीछे नहीं हटेंगे । इसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए मैं आपकी दी सलाह पर विचार करूँगी ।''

''नाना साहेब और तांतियातोपे सही समय पर यहाँ पहुँच जाते तो यहाँ की परिस्थितियाँ इतना गंभीर रूप न लेतीं । हम अंतिम क्षण तक लड़ेंगे और झान्सी के ध्वज का गौरव बनाये रखेंगे । इसके अलावा और कोई उपाय नहीं दीखता ।'' प्रमुखों ने कहा ।

तुरंत रानी के क़िले के बाहर चले जाने के आवश्यक प्रबंध होने लगे । गुप्तचरों ने छानबीन करने के बाद आकर रानी से कहा कि क़िले के आसपास कंपनी के सैनिक मौजूद नहीं हैं ।

नन्हें दत्तक पुत्र दामोदर को रानी ने अपनी पीठ पर बाँध लिया । दो

परिचारिकाओं व कुछ अंगरक्षकों को लेकर उस अंधेरी रात में रानी क़िले के बाहर आयीं । व्यापार निमित्त आयी कंपनी की दुराशा व महत्वाकांक्षा के कारण झान्सी लक्ष्मीबाई को अपना निजी क़िला आधी रात के समय छोड़ना पड़ा ।

◆ ◆ ◆

योजनानुसार दूसरे दिन प्रातःकाल के पूर्व ही ब्रिटिश सेनाओं ने झान्सी के क़िले को चारों ओर से घेर लिया । क़िले के अंदर के लोगों ने उनका डटकर मुक़ाबला किया । उन्होंने अपने प्राणों की भी परवाह नहीं की । उनका धैर्य देखकर शत्रु भी चकित रह गये । एक युवक अचानक क़िले के ऊपरी भाग से अंग्रेज़ दलनायक के कंधों पर आ गिरा और फ़ौरन तलवार निकालकर उसका सिर काट दिया । दूसरे ही क्षण एक सैनिक ने बंदूक चलाकर उस युवक को मार डाला ।

इसके बाद कुछ सैनिक दीवारों पर चढ़ गये और अंदर प्रवेश किया । वहाँ प्रवेश करने के बाद उन्होंने दरवाज़े खोल दिये । ब्रिटिश सैनिक क़िले में घुस गये ।

बंदूक चलाने के कारण घायल एक स्त्री दौड़ती हुई आयी और एक अंग्रेज सैनिक के मुँह पर थूक दिया । इतने में उस स्त्री पर गोलियाँ चलीं और वह वहीं धराशायी हो गयी ।

अस्सी साल के एक वृद्ध को एक ब्रिटिश सैनिक ने अपने बंदूक का निशाना बनाया । वह वृद्ध छलांग मारकर उसके पास गया और उसकी गोली उसको छाती को पार कर जाए, इसके पहले ही उसके गले को



नोचकर उसे मार डाला ।

क़िले के अंदर जितने भी स्त्री-पुरुष थे, उनके पास कोई हथियार नहीं था । फिर भी जो कोई भी चीज़ हाथ आयी, ली और शत्रुओं पर टूट पड़े । पर थोड़े ही समय में बहुत लोग या तो मर गये या क़ैद हुए । पकड़े गये लोगों को ब्रिटिश सैनिकों ने बहुत सताया औड़ यह कहने के लिए उनपर दबाव डाला कि उनकी रानी कहाँ छिपी है ।

उन्होंने आवेश में आकर कहा ''तुम्हारे शवों को गाड़ने के लिए गड्ढे खुदवा रही हैं ।''

उनकी इन कड़ुवी बातों से नाराज़ ब्रिटिश सैनिकों ने वहीं का वहीं उन सबको मार डाला । इस काम से भी वे तृप्त नहीं हुए । क्योंकि वे रानी को पकड न सके । उन्होंने किले का चप्पा - चप्पा ढूँढ निकाला । जो

भी बड़ी पेटी दिखायी पड़ी, खोलकर देखा। आख़िर यहाँ तक कि इस उम्मीद से एक सैनिक ने उजड़े एक कुएँ में उतरकर ढूँढ़ा कि कहीं रानी यहाँ छिपी तो नहीं है। वहाँ रानी तो नहीं मिली पर साँप के डसने से वह सैनिक मर गया।

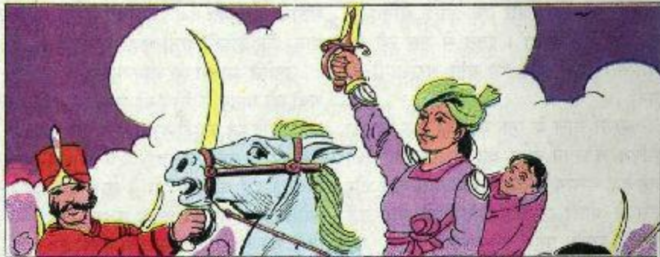
ब्रिटिश सैनिक रानी के न मिलने पर अपने आपको धिक्कारते रहे, तिलिमिला उठे और नागरिकों को मारने लगे। बूढ़ों और यहाँ तक कि बच्चों को भी उन्होंने नहीं छोड़ा। घरों को लूटा और फिर जला डाला। पूरा नगर भस्म हो गया।

क़िले पर फ़तह पाने के बाद भी सर हाग रोज को लग रहा था कि उसकी हार ही हुई। उसका मुख्य ध्येय रानी को क़ैद करना था। उससे क्षमा-भिक्षा मंगवानी थी। उसे पाठ सिखाना था। तद्वारा अन्य विद्रोहियों को डराना था, जिससे भविष्य में वे अंग्रेजों के विरुद्ध लड़ने का साहस न करें। किन्तु उसकी आशा सफल नहीं हुई।

उसी रात को रानी कल्पि निकल पड़ीं। क़िले से थोड़ी ही दूरी पर सुनसान एक भवन में बोकर नामक एक दलनायक अपने कुछ सैनिकों के साथ ठहरा हुआ था। जब बोकर भवन के बाहर आया तो उसने देखा कि कोई घोड़े पर सवार होकर तेज़ी से जा रहा है। उसे संदेह हुआ कि कहीं वह रानी तो नहीं है। 'रानी को पकड़नेवाले को मूल्यवान पुरस्कार दिया जायेगा।'' हाग रोज की यह घोषणा उसके दिमाग में कौंध पड़ी। उसमें आशा जागीं। उसने निश्चय किया कि उस घुड़सवार को पकड़कर ही रहूँगा। उसने सैनिकों को अपने साथ आने की आज्ञा दी। घोड़े पर सवार होकर वह तेजी से पीछा करने लग गया। थोड़ी देर बाद वह रानी के घोड़े के निकट आकर चिल्ला पड़ा ''रुक जाओ''।

पल भर में रानी पलटीं और बोकर पर टूट पड़ीं। एक हाथ में घोड़े की लगाम थाम ली और दूसरे हाथ से तलवार निकालकर बोकर का सिर काट दिया। भयंकर चीत्कार करता हुआ बोकर घोड़े पर से गिर पड़ा। फिर रानी बड़ी ही तेज़ी से अपने गम्य स्थल की ओर बढ़ीं।

बोकर के पीछे-पीछे आये उसके सैनिकों ने भूमि पर पड़े हुए रक्त-सिक्त अपने दलनायक को उठाया। -सशेष





विवेकी

बहुत समय के पहले की बात है। सुमंत नामक राजा कौसल राज्य का शासक था। वह मानसिक रूप से ही नहीं, शारीरिक रूप से भी दुर्बल राजा था। सुमंत के दादा-परदादा बड़े ही पराक्रमी व शक्तिवान व समर्थ थे। उन्होंने कुछ अपूर्व शक्तियाँ पायीं जिन्हें वे सुमंत को देकर स्वर्ग सिधारे। उन्होंने उसे हित-बोध भी किया कि उनकी सहायता से शासन-भार सुचारू ढंग से संभालो। किन्तु सुमंत ने उन अद्भुत शक्तियों का कभी भी उपयोग नहीं किया। इसका कारण था दुर्बल सुमंत में उनको उपयोग में लाने का विवेक नहीं था।

कुछ सालों बाद सुमंत मर गया। मरने के पहले उसने अपने दोनों पुत्रों को बुलाया और उनसे कहा ''पुत्रो, मैं हर प्रकार से दुर्बल था, इसलिए मेरा-जीवन व्यर्थ हो गया। राजा होकर भी मैं यश पा न सका। तुम्हारे दादा-परदादाओं की दी हुई अपूर्व शक्तियों के होते हुए भी प्रजा को मैं सुखी रख नहीं सका। तुम दोनों ही सही, उन शक्तियों की सहायता से सुव्यवस्थित रूप से शान-भार संभालो। यहाँ से उत्तरी दिशा में कोस भर की दूरी में घना अरण्य है। उसकी दूसरी तरफ़ लाल पर्वत है। उन पर्वतों की पूर्वी दिशा में हमारी इष्टदेवी काली माता का मंदिर है। उस मंदिर के गर्भगृह में देवी के पावों के पास कुंकुम डिब्बे के आकार का अरगला है। उसे ज़ोर देकर दबाओगे तो मार्ग दिखायी देगा। वहाँ भूमि पर मंत्रोच्चारित चावल हैं। तांबे का अक्षय पात्र भी वहाँ है। उस चावल को ले आना और काली माता का स्मरण करना। चावल भूमि पर बिखेरना। हज़ारों सैनिक वहाँ प्रकट होंगे। उस सेना के बल-पराक्रम के आधार पर हमारे राज्य को

अक्षय वर्मा



विस्तरित करो । उस अक्षय पात्र की महिमा से प्रजा को सुखी रख । उन्हें भूख-प्यास से बचाना । यही नहीं, एक और अद्भुत बात भी सुनो । जब कभी भी हमारे देश में अकाल पड़ेगा, वर्षा नहीं होगी तब काली माता की पूजा करो, काली माते के हाथ में जो खड्ग है, उसे लाने पर उस खड्ग की महिमा से मूसलाधार वर्षा होगी, भूमि शश्य-श्यामल होगी । एक और मुख्य विषय मुझसे सुनो । मंत्रोच्चारित चावल से उत्पन्न सैनिकों को अन्न की कमी पड़ गयी तो वे फिर से चावल का रूप धारण करेंगे । तब तुम्हारी सैन्य शक्ति नहीं के बराबर होगी । अन्य देशों पर विजय पाने की बात तो दूर, अपने देश की भी रक्षा नहीं कर पाओगे । अतः इन शक्तियों का सही उपयोग न हो तो तुम्हारी ही हानि होगी । इस विषय में सावधानी बरतना ।''

सुमंत के मरते ही उसका बड़ा बेटा राजा बना । कुछ समय बाद वर्षा के न होने से देश में अकाल पड़ गया । दिन बीतते गये । भूख-प्यास से लोग मरने लगे । ऐसे संदर्भों में अकाल भूतनी नामक एक राक्षसी आप ही आप प्रकट होती थी और फिर से जब बारिश होने लगती थी, गायब हो जाती थी । जब तक वह उपस्थित रहती, देश भर में अराजकता की सृष्टि करती रहती थी । देश भर में हाहाकार मच जाता था । भूख-प्यास से जनता तड़प उठती थी और राक्षसी ये दृश्य देखकर ठठाकर हँसती रहती थी ।

अग्रज ने मंत्रियों को समाविष्ट किया और निर्णय लिया कि महिमामयी वह खड्ग ले आऊँगा और वर्षा बरसाकर अकाल का निर्मूलन करूँगा ।

एक दिन कुछ सैनिकों को लेकर जब वह उस काली माता के मंदिर जाने निकल रहा तब उसके अनुज ने आकर कहा ''क्या मैं भी तुम्हारे साथ आऊँ ?''

बड़ा भाई हँस पड़ा और कहा ''मैं मार्ग भी जानता हूँ, घुड़सवारी भी । साथ सौ सैनिक भी हैं । ऐसी स्थिति में मुझे तुम्हारी क्या जरूरत है ?'' वह घोड़े पर सवार होकर आगे बढ़ गया ।

तीन तिहाई जंगल पार करने के बाद कहीं से अकाल भूतनी आँधी की तरह आयी और उन्हें रोका । उसके प्रभाव से जंगली पेड़ भी जोर जोर से हिलने-डुलने

लगे । सैनिकों ने भाले उस भूतनी पर फेंके । भूतनी ने ठठाकर हँसते हुए कहा ''जब तक महिमा-भरा खड्ग नहीं लाओगे और बारिश नहीं बरसाओगे , तब तक मेरा कोई कुछ बिगाड़ नहीं सकता । उसी काम पर तुम जा रहे हो और मैं तुम्हें सताकर ही छोड़ूँगी । तुम्हारा रास्ता रोककर ही रहूँगी''। कहकर उसने उफ़ करते हुए ज़ोर की हवा की सृष्टि की । उस तीव्र हवा में राजा और सैनिक उड़े और नगर की सरहदों पर जा गिरे ।

यह जानकर अनुज अकेले ही घोड़े पर सवार होकर काली माता के मंदिर जाने निकल पड़ा । दिन भर वह अरण्य के बाहर ही रहा । रात के समय उसने अरण्य में यात्रा की । इसलिए निद्रा में मस्त सोयी पड़ी अकाल भूतनी से उसे कोई नष्ट नहीं पहुँचा ।

वह काली माँ के मंदिर के पास गया । सरोवर में स्नान किया । काली माता को भक्ति-श्रद्धा से नमस्कार किया । फिर उसने काली मां के हाथ से वह खड्ग ले लिया और लौट पड़ा । दूसरे ही क्षण बादल घिर आये और मूसलाधार वर्षा हुई ।

तीन दिनों तक लगातार वर्षा होती रही । अनुज ने वह खड्ग यथास्थान पर रख दिया । पूरा राज्य जलमय हो गया । उस वर्षा में भीगकर अकाल भूतनी पिघल गयी । प्रजा ने अनुज की भरपूर प्रशंसा की ।

यह बड़े भाई को अच्छा नहीं लगा । छोटे भाई के प्रति उसमें ईर्ष्या उत्पन्न हो



गयी । उसने सोचा कि मैं इससे भी बड़ा कोई काम करूं और जनता का प्रिय राजा बनूं । वह दूसरे ही दिन काली माँ के मंदिर पहुँचने निकल पड़ा । मंदिर पहुँचने के बाद उसने अरगला दबाया और अक्षय पात्र ले लिया । लौटने के बाद उसने नगर में यों घोषणा करवायी ''प्रजाओ, आप परिश्रम करते हैं, पसीना बहाते हैं, रात-दिन काम पर लगे रहते हैं । फसल उगाते हैं । यह सब कुछ क्यों ? भोजन ही के लिए न ? अब आगे से आप लोगों को कष्ट झेलने की कोई आवश्यकता नहीं । बिना मेहनत के ही आपको सब कुछ मयस्सर होगा । हमारे राजा ने एक ऐसा महत्वपूर्ण प्रबंध किया है, आपके लिए, आपके सुख के लिए, कल से आप सबके लिए क़िले में ही स्वादिष्ठ भोजन



का प्रबंध होगा । आइये और पेट भर खाकर सुखी रहिये ।''

दूसरे दिन से क़िले में अन्न-दान ज़ारी रहा । प्रजा समय पर आती, अक्षय-पात्र द्वारा प्राप्त स्वादिष्ट भोजन करती और कोई काम न होने के कारण घोड़े बेचकर सोती । यों समय-गुजरता गया । जनता अब एकदम सुस्त हो गयी । जब देखो, विश्राम करने लगी । वह यह भी भूल गयी कि वे कौन है और उन्हें क्या करना चाहिये । उनमें एक मस्ती-सी छा गयी, जिससे वे अकर्मण्य बन गये ।

इन परिस्थितियों में एक दिन बड़े ने राज्य में पर्यटन किया । कहीं भी खेती नहीं हो रही थी । पशु-पोषण भूल ही गये । राज्य श्मशान की तरह निर्जीव था । सब कुछ शिथिल लगने लगा । राज्य की यह दुस्थिति देखकर बड़ा भाई अवाक् रह गया ।

उसने मंत्रियों को बुलाकर उन्हें वर्तमान स्थिति बतायी तो उन्होंने कहा ''प्रभु, आपका निर्णय अनुचित है । इस अक्षय पात्र के कारण राज्य की अपार हानि हुई है । उससे प्रजा की रत्ती भर की भी भलाई नहीं हुई । कुछ बुद्धिमान व्यक्ति आपको पागल ठहरा रहे हैं और आपसे नाराज़ हैं । आपको फ़ौरन कोई अद्‌भुत कार्य करना होगा और प्रजा की प्रशंसा पानी होगी । नहीं तो आपके अनुज को आपके स्थान पर सिंहासन पर बिठाना तथ्य है''।

छोटे भाई की बात सुनते ही वह नाराज़ हो उठा । तुरंत अक्षय पात्र को ले जाकर वहीं रख दिया, जहाँ से उसे वह ले आया था । वहाँ से इस बार मंत्रोच्चारित चावल ले आया और भूमि पर बिखेर दिया । दूसरे ही क्षण असंख्य सेना उत्पन्न हो गयी ।

बड़े ने मंत्री व सेनाधिपतियों को बुलाकर कहा ''इस सेना की सहायता से सब राज्यों पर विजय पाना चाहता हूँ । इससे मैं सम्राट बनूँगा और साथ ही हमें अपार संपदा मिलेगी । अड़ोस-पड़ोस के देशों पर आक्रमण करेंगे । इसके लिए आवश्यक योजनाएँ बनाइये । व्यूह शीघ्र ही तैयार कीजिये । तब जाकर प्रजा को मालूम होगा कि मैं कितना महान हूँ, मेरा क्या महत्व है ।''

दस दिन गुजर गये । आक्रमण के पहले ही सैनिकों के खाद्य-पदार्थों के लिए खज़ाना खाली हो गया । सैनिकों को अब खिलाने की स्थिति में नहीं था । बड़े को कुछ सूझ नहीं रहा था कि अब क्या किया जाए, जब वह इस सोच में पड़ गया, तब देखते-देखते सब सैनिक चावल में बदल गये ।

इस घटना ने बड़े को पागल-सा बना दिया । वह कहने लगा ''नहीं, मुझे यह राज्य नहीं चाहिये, न ही इससे उत्पन्न होनेवाली समस्याएँ । भाई ही राज्य-भार संभाले । मैं भी देखूंगा कि वह इस काम में किस हद तक सफल हो पायेगा । मैं अभी विलास-मंदिर चला जाऊँगा ।'' यों मंत्रियों से कहकर तेज़ी से वहाँ से भागता हुआ गया ।

मंत्री व सेनाधिपति तुरंत अनुज के पास गये और विस्तारपूर्वक विषय बताया । उन्होंने उससे कहा ''अभी आप काली माँ के मंदिर में जाइये, अक्षय पात्र ले आइये । मंत्रोच्चारित वह चावल भी लेते आइयेगा । उन्हें सेना में बदलिये, अन्य राज्यों को अपने अधीन कीजिये और चक्रवर्ती बनिये ।''

अनुज ने उनकी इच्छाओं का तिरस्कार करते हुए कहा ''अब समस्या मेरा चक्रवर्ती बनने की नहीं है, मुझे अन्य राज्यों को अपने अधीन नहीं करना है । अक्षय पात्र की वजह से लोग अपने-अपने पेशे भूल गये, सुस्त बन गये, मेहनत करने पर तैयार नहीं । उन्हें अब उन-उनके कामों पर लगाना मेरा प्रथम कर्तव्य है । अक्षयपात्र व चावल काली माँ के मंदिर में ही सुरक्षित रहें । कभी अकाल पड़ा या किसी पराये राजा ने हमपर हमला किया तो उन अद्‌भुत शक्तियों को उपयोग में ले आयेंगे ।''

मंत्री व सेनाधिपति उसके निर्णय पर खुश हुए । उन्होंनें पूछा ''अब आपकी क्या आज्ञा है ?''

''देश भर में घोषणाएँ करवाइये कि सब अपने-अपने कामों में लग जायें । घोषणा के चौबीस घंटों के बाद भी अगर कोई बेकार बैठा ही रहा तो उसे क़ैद कीजिये ।'' अनुज ने आज्ञा दी ।

राजा का आदेश प्रजा ने सुना । वे अपने-अपने पेशों में लग गये । इसके बाद अनुज के शासन-काल में कभी भी अकाल नहीं पड़ा । अकाल भूतनी ने फिर से आने का साहस नहीं किया ।

